SURESH GYAN VIHAR UNIVERSITY
Accredited by NAAC with 'A+' Grade

Master of Arts

(Hindi)

आधुनिक हिंदी काव्य (HNL-507)

Semester-I

Author- Sahil Kumar

SURESH GYAN VIHAR UNIVERSITY

Centre for Distance and Online Education
Mahal, Jagatpura, Jaipur-302025

EDITORIAL BOARD (CDOE, SGVU)

Dr (Prof.) T.K. Jain
Director, CDOE, SGVU

Ms. Hemlalata Dharendra
Assistant Professor, CDOE, SGVU

Ms. Kapila Bishnoi
Assistant Professor, CDOE, SGVU

Mr. Ashphaq Ahmad
Assistant Professor, CDOE, SGVU

Dr. Manish Dwivedi
Associate Professor & Dy, Director, CDOE, SGVU

Mr. Manvendra Narayan Mishra
Assistant Professor (Deptt. of Mathematics) SGVU

Published by:

S. B. Prakashan Pvt. Ltd.

WZ-6, Lajwanti Garden, New Delhi: 110046

Tel.: (011) 28520627 | Ph.: 9205476295

Email: info@sbprakashan.com | Web.: www.sbprakashan.com

© SGVU

All rights reserved.

No part of this book may be reproduced or copied in any form or by any means (graphic, electronic or mechanical, including photocopying, recording, taping, or information retrieval system) or reproduced on any disc, tape, perforated media or other information storage device, etc., without the written permission of the publishers.

Every effort has been made to avoid errors or omissions in the publication. In spite of this, some errors might have crept in. Any mistake, error or discrepancy noted may be brought to our notice and it shall be taken care of in the next edition. It is notified that neither the publishers nor the author or seller will be responsible for any damage or loss of any kind, in any manner, therefrom.

For binding mistakes, misprints or for missing pages, etc., the publishers' liability is limited to replacement within one month of purchase by similar edition. All expenses in this connection are to be borne by the purchaser.

Designed & Graphic by : S. B. Prakashan Pvt. Ltd.

Printed at :

विषय-सूची

इकाई 1

मैथिलीशरण गुप्त 5

इकाई 2

यशोधरा काव्य का सिद्धार्थ सर्ग 13

इकाई 3

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के 27

इकाई 4

सूर्यकांत त्रिपाठी "निराला" 51

इकाई 5

जागो फिर एक बार 'जयशंकर प्रसाद' 60

vf/kxe ifj.kke (Learning out comes)

fo|kFkhZ le>us esa l{ke gksaxs

bdkbZ &1

- fo|kFkhZ efFkyh'kj.k xqIr d thou ifjp; dk Kku ikIr dj ldx
- og efFkyh'kj.k xqIr dh lkfgfR;d Hkk"kk 'kyh dk v/;;u dj ldx
- o xqIr th dh dk0;xr fo'k'krkvk dk v/;;u dj ldx

bdkbZ &2

- fo|kFkh ;'kk/kjk dk0; d ink dh 0;k[;k dj ldx
- o ;'kk/kjk dk0; d ek/;e l mif{kr ik= ;'kk/kjk dh ukjh Hkkouk dk v/;;u dj ldx
- og fojg dk0; d :Ik e ;'kk/kjk dk0; dh leh{kk dj ldx

bdkbZ &3

- fo|kFkh lkdr dk0; d ukedj.k d egRo dk le> ldx
- o lkdr d uoe lx dh dFkk ;ktuk v/;;u dj ldx
- o dk0; d ek/;e l mfeyk dh fojg 0;Fkk dk Kku ikIr dj ldx

bdkbZ &4

- fo|kFkh l;dkUr f=ikBh *fujkyk dk thou ,o lkfgfR;d ifjp; ikIr dj ldx
- o fujkyk d dk0; e eDr Nn dh vo/kkj.kk ,o i;kx dk v/;;u dj ldx
- o tkxk fQj ,d ckj dfork e lkekftd ,o jk"Vh; pruk dk v/;;u dj ldx

bdkbZ &5

- fo|kFkh t;'kdj ilkn dk thou ,o lkfgfR;d ;kxnku dk Kku ikIr dj ldx
- o t;'kdj ilkn d lkfgR; e ,frgkfldrk ,o dYiuk dk v/;;u dj ldx
- o dkek;uh ¼J)k½ bMk vkj jgL;] lx½d ink dh 0;k[;k dj ldx

आधुनिक हिन्दी काव्य
अध्ययन

इकाई 1

मैथिलीशरण गुप्त

प्रस्तावना, जीवन परिचय, साहित्यिक अवदान, मातृभूमि के प्रति प्रेम, प्रजातन्त्र में आस्था, समाज सुधार की भावना, गाँधीवाद का प्रचार, विश्वबन्धुत्व की भावना, ख़तियाँ, काव्यगत विशेषताएँ, भावपक्षीय विशेषताएँ, **कलापक्षीय विशेषताएँ**

इकाई 2

यशोधरा काव्य का सिद्धार्थ सर्ग

उद्देश्य, प्रस्तावना, 'यशोधरा' के चयनित अंशों की व्याख्या, 'साकेत' के चयनित अंशों की व्याख्या, **सारांश**

इकाई 3

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

उद्देश्य, प्रस्तावना, सूरदास, तुलसीदास, मैथिलीशरण गुप्त, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', महादेवी वर्मा, **सारांश**

इकाई 4

सूर्यकांत त्रिपाठी "निराला"

प्रस्तावना, जीवन परिचय, साहित्यिक अवदान, काव्यगत विशेषताएँ, **भगवान बुद्ध के प्रति**

इकाई 5

जागो फिर एक बार 'जयशंकर प्रसाद'

उद्देश्य, प्रस्तावना, जागरण का स्वर, संध्या-सुंदरी, मातृ-वंदना, भिक्षुक, रचनाएँ और रचना संसार, रचनाएँ, नाटक, खोलो द्वार, किरण आँसू, **आशा सर्ग (कामायनी)**

इकाई 1

मैथिलीशरण गुप्त

पाठ-संरचना

1.1 प्रस्तावना
1.2 जीवन परिचय
1.3 साहित्यिक अवदान
1.4 मातृभूमि के प्रति प्रेम
1.5 प्रजातन्त्र में आस्था
1.6 समाज सुधार की भावना
1.7 गाँधीवाद का प्रचार
1.8 विश्वबन्धुत्व की भावना
1.9 ख़तियाँ
1.10 काव्यगत विशेषताएँ
1.11 भावपक्षीय विशेषताएँ
1.12 कलापक्षीय विशेषताएँ
1.13 अभ्यास प्रश्न

टिप्पणी

1.1 प्रस्तावना

मैथिलीशरण गुप्त हिन्दी 'काव्य सरोवर' के 'कमनीय कमल' हैं। किसी विनम्र, विनयशील, सात्विक तथा स्वाभिमान की भावना से परिपूर्ण गांधीवादी व्यद्रित्व के दर्शन करने हों तो हमें मैथिलीशरण गुप्त को जानना होगा। गुप्त जी जनभावना के प्रतीक हैं। जन-जन के प्रति मुखरित उनकी यह भावना मानवता के तत्वों से युद्र तथा सात्विकता से ओत-प्रोत हैं। गुप्त जी के साहित्य में कहीं भी वासना के दर्शन नहीं होते। इनका साहित्य मानवीय संवेदना एवं करूणा से परिपूर्ण है। गुप्त जी भारतीय संस्ख्रति के अमर गायक, उद्भट प्रस्तोता और सामाजिक चेतना के प्रतिनिधि कवि हैं। भारतीय साहित्य अनेक उदात्त भावनाओं का संग्रह है। इन उदात्त भावनाओं के अन्तर्गत राष्ट्रीयता की भावना का सर्वोपरि महत्व है। राष्ट्र के विकास और हित के लिए जो-जो क्रियाएँ, आस्थाएँ तथा धारणाएँ आवश्यक होती हैं उन सबके सामूहिक नाम को राष्ट्रीयता कहते हैं। पाश्चात्य विद्वान ऐडनबर्ग के अगुप्त जी ने अपने काव्य में विविध रसों की छटा बिखेरी है। उर्मिला प्रिय के वियोग में आरती के समान जलती रहती है

"राष्ट्रीयता एक इच्छा है, जो बहुत से लोगों को किसी
एक राजनीतिक संगठन में रहने को बाधय करती है।"

गुप्त जी राष्ट्रकवि थे। उन्होंने तत्कालीन भारतीय दुर्दशा पर क्षोभ प्रकट किया। वे युग-चेतना और उसके विकसित होते हुए स्वरूप के प्रति सजग थे। सुप्त भारतीयों में राष्ट्रीय भावना जागृत करने वाले कवियों में गुप्त जी का सर्वोच्च स्थान है। इसीलिए उन्हें राष्ट्रकवि होने का महान गौरव प्राप्त है। राष्ट्रकवि गुप्त जी ने अपनी अनोखी प्रतिभा से हिन्दी काव्य दीप को नवीन आलोक और नवीन रूप प्रदान किया। उनका काव्य आधुनिक भारत का सच्चा दर्पण है।

1.2 जीवन परिचय

महाकवि मैथिलीशरण गुप्त का जन्म सन् 1886 में झांसी जनपद के चिरगाँव नामक स्थान पर एक वैश्य कुल में हुआ था। इनके पिता श्री रामचरण गुप्त भगवद् भद्र और हिन्दी साहित्य से विशेष प्रेम था। वे स्वयं भी कविता किया करते थे। गुप्त जी की शिक्षा-दीक्षा घर पर ही हुई। उनके घर का वातावरण साहित्यिक था। इसीलिए गुप्त जी के मन में कविता के प्रति रूचि जागृत हुई। बचपन में गुप्त जी ने अपने पिताजी की कङ्कमी पर एक स्वरचित छप्पय लिख दिया, जिसे पढ़कर उनके पिताजी ने उन्हें आर्शीवाद दिया-"तुम स्कल सि) कवि हो"। पिताजी का यह आर्शीवाद राष्ट्रकवि के लिए भविष्य में सत्य ही सि) हआ। गुप्त जी के छोटे भाई सियारामशरण गुप्त भी हिन्दी के अच्छे कवि रहे हैं।

इसी बीच हिन्दी साहित्य के प्रखर स्तम्भ आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के सम्पर्क में आने से इनकी प्रतिभा चमक उठी और इनके काव्य जीवन को नयी प्रेरणा मिली। ये आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी को अपना गुरू मानते थे। द्विवेदी जी की प्रेरणा से गुप्त जी ने सर्वप्रथम खड़ी बोली में 'भारत-भारती' नामक ख़ति की रचना की। गुप्त जी का स्वभाव, वेशभूषा और रहन-सहन सादा और सरल था। उनके ऊपर गांधी जी के विचारों की छाप थी। उनकी निरंतर काव्य साधना और राष्ट्रीयता ने उनको इतना ऊँचा उठा दिया था कि आगरा और प्रयाग विश्वविद्यालयों ने उन्हें डी.लिट. की मानद उपाधि से विभूषित किया। उनके साकेत नामक महाकाव्य पर हिन्दी साहित्य सम्मेलन ने 'मंगला प्रसाद पारितोषक' प्रदान किया। गुप्त जी को दो बार राज्यसभा का सदस्य मनोनीत किया गया। गुप्त जी मानवीय और राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत थे। असहयोग आन्दोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने के कारण इन्हें कई बार जेल भेजा गया। सन् 1909 में इनकी पुस्तक 'रंग में भंग' तथा सन् 1912 ई. में 'भारत-भारती' का प्रकाशन हुआ। भारत सरकार ने सन् 1945 ई. में इनकी साहित्यिक सेवाओं के लिए उन्हें 'पद्मभूषण'

टिप्पणी

की उपाधि से अलंख्रत किया। 12 दिसम्बर सन् 1964 ई. में माँ भारती के इस अनन्य साधक ने अपनी इहलीला संवरण कर ली।

1.3 साहित्यिक अवदान

मैथिलीशरण गुप्त में बाल्यावस्था से ही काव्यात्मक प्रवृत्ति विद्यमान थी। ये बचपन से ही छुटपुट रचनाएँ करते थे। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपर्क में आने के पश्चात् उनकी प्रेरणा से काव्य-रचना करके इन्होंने हिन्दी साहित्य की धारा को समृ) किया। इनकी कविता में राष्ट्रभद्रि एवसं राष्ट्रप्रेम का स्वर प्रमुख रूप से मुखरित हुआ है। इस कारण हिन्दी साहित्य के तत्कालीन विद्वानों ने इन्हें 'राष्ट्रकवि' की उपाधि से विभूषित किया।

गुप्त जी आधुनिक युग के श्रेष्ठ कवियों में से एक समझे जाते हैं। इनकी प्रारंभिक रचनाएँ मैथिलीशरण गुप्त कलकत्ता से प्रकाशित होने वाली पत्रिका 'वैश्योपकारक' में प्रकाशित होती थीं। इन रचनाओं में इतिवृत्तात्मक कथन एवं कठोरता है। इसमें एक प्रकार से कहानियाँ कही गयी हैं और भावात्मक सरसता का आभाव है।

मैथिलीशरण गुप्त आधुनिक युग की खड़ी बोली के निर्माता और उन्नायक कवियों में से हैं। गुप्त जी द्विवेदी युग के सर्वाधिक लोकप्रिय कवि हैं। गुप्त जी में चिन्तन एवं मौलिक दोनों प्रकार की अनुपम प्रतिभा थी। गुप्त जी ने अपनी अलौकिक प्रतिभा से हिन्दी जगत को विपुल मात्र में साहित्य प्रदान किया। हिन्दी साहित्य का प्रत्येक पाठक इस सरल सीधे एवं प्रतिभाशाली कवि से परिचित है। उनके काव्य में सम्पूर्ण भारत की आत्मा मुखरित हो उठी है। तभी तो उनहें भारत का सच्चा राष्ट्रकवि माना जाता है। उनकी काव्यधारा ऐसी पवित्र गंगा है, जिसमें अवगाहन कर आत्मा पवित्र और उन्मुद्र हो जाती है।

1.4 मातृभूमि के प्रति प्रेम

गुप्त जी ने मातृभूमि की वन्दना करते हुए उसके स्वरूप का भी चित्रण किया है

"नीलाम्बर परिधान हरित तट पर सुन्दर है।
सूर्यचन्द्र युगमुकुट, मेखला रत्नाकार है॥
नदियाँ प्रेम-प्रवाह फूल तौरण मण्डन है।
बन्दीजन खग वृन्द, शेषफन सिंहासन है॥
करते अभिषेक पयोद हैं, बलिहारी इस देश की।
हे मातृभूमि, तू सत्य ही सगुण मूर्ति सर्वेश की॥"

1.5 प्रजातंत्र में आस्था

गुप्त जी प्रजातन्त्र के महान पोषक थे। देश के कण-कण से उन्हें अनुराग था। आज शासन की बागडोर प्रजा के हाथ में है, अत: राजा तो प्रजा का सेवक मात्र है यदि वह न्यायपूर्वक शासन नहीं करता है तो प्रजा उसे हटाकर दूसरा राजा बना सकती है।

"राजा प्रजा का पात्र है, वह एक प्रतिनिधि मात्र है।
यदि वह प्रजापालक नहीं तो त्याज्य है।
हम दूसरा राजा चुनें, जो सब तरह सबकी सुने।
कारण प्रजा का ही असल में राज्य है।"

टिप्पणी

1.6 समाज सुधार की भावना

कवि ने काव्य की रचना समाज सापेक्ष रूप से की है। भारत-भारती में गुप्त जी ने हिन्दू-समाज, नारी, साधु-सन्त, मन्दिर, महन्त आदि की दयनीय स्थिति का चित्रण किया है। गुप्त जी ने भारतवासियों के मधय व्याप्त जाति-भेद, छुआछूत तथा भेदभाव पर आधारित भावना को त्याज्य बताकर मानवता का उपदेश दिया

"एक अतुल हम सबका मूल, हमको भिन्न समझना भूल।
सम्प्रदाय रूचि के अनुकूल, हैं श्रद्धा के ही संस्थान।"

1.7 गाँधीवाद का प्रचार

गुप्त जी सत्य अहिंसा के पुजारी थे। उन्होंने समस्त विश्व की कल्याण की कामना की है। उनके द्वारा 'खादी का प्रचार' इन शब्दों में व्यक्त हुआ है

"आओ हम कातें बुनें, ज्ञान की लय में।"

1.8 विश्वबन्धुत्व की भावना

गुप्त जी ने अपने साहित्य सृजन के लिए किसी न किसी प्राचीन आख्यान को आधर बनाया है। और उनके द्वारा भारतवासियों को कर्तव्य परायणता का उपदेश दिया है। कवि का मत है कि न्याय के लिए दण्ड देना अनिवार्य है, चाहे वह अपना इष्ट व्यक्ति क्यों न हो

"अधिकार खोकर बैठे रहना, यह महादुष्कर्म है,
न्यायार्थ अपने बन्धु को भी दण्ड देना धर्म है।"

गुप्त जी ने भारतीय संस्कृति को विविध प्रकार से पोषक बनाया, चेतनामय बनाया तथा अपने काव्य में युगीन समस्याओं को प्रस्तुत करके उनका समाधन भी प्रस्तुत किया। प्राचीन संस्कृति एवं राष्ट्र भाव की अपने काव्य में प्रस्तुति कर इन्होंने युगधर्म का निर्वाह किया और अतीत के आदर्श को वर्तमान की प्रेरणा के रूप में प्रस्तुत किया। ये द्विवेदी युग के सबसे अधिक लोकप्रिय कवि माने जाते हैं।

1.9 कृतियाँ

गुप्त जी की चालीस मौलिक तथा छः अनुदित रचनाएँ प्रकाशित हुई हैं। उनकी प्रसिद्ध मौलिक काव्य कृतियों का विवरण इस प्रकार है-

भारत भारती

इस काव्यकृति में गुप्त जी ने भारतीय संस्कृति और सभ्यता का गुणगान किया है। इस काव्यरचना के कारण इन्हें राष्ट्रकवि होने का गौरव प्राप्त हआ।

साकेत

यह गुप्त जी का महाकाव्य है। इसमें उपेक्षित उर्मिला की करूणा कथा को प्रस्तुत किया गया है।

यशोधरा

इसकी रचना उपेक्षित यशोधरा के चरित्र को आधर बनाकर की गयी है।

पंचवटी

इस लघु खण्डकाव्य में गुप्त जी ने सुन्दर प्रकृति की पृष्ठभूमि के साथ लक्ष्मण के चरित्र को उजागर किया है।

द्वापर

इस कृति में कवि ने द्वापर युद्ध के साथ आधुनिक समस्याओं को चित्रित किया है। इसमें नारी समस्याओं को विशेष रूप से उभारा गया है।

इसके अतिरिक्त गुप्त जी की अन्य काव्य रचनाएँ हैं

'जयद्रथ

वध', 'जय-भारत', 'अनध', 'सिद्धराज', 'झंकार', 'कुणाल-गीत', 'नहुष', 'पृथ्वीपुत्र', 'रंग में भंग', 'विष्णुप्रिया', 'मंगल घट', 'प्रदक्षिणा', 'गुरूकुल' आदि। इनकी अनूदित रचनाएँ हैं- 'प्लासी का युद्ध', 'मेघनाथ वध', 'वृत्त संहार' आदि।

1.10 काव्यगत विशेषताएँ

गुप्त जी भावुक हृदय कवि थे। उन्होंने समाज की विविधता को आधर बनाया। कवि ने मनुष्य के समग्र जीवन का चित्रण किया है और उसे भारतीय संस्कृति के अनुसार ही व्यक्त किया हैं आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी का कथन है- "गुप्त जी ने रामभक्ति के साथ-साथ मानव प्रेम, मानव सेवा, विश्व बन्धुत्व आदि पावन भावनाओं का अपने काव्य में समावेश किया। एक ओर ये भारतीय संस्कृति की रक्षा करने में संलग्न थे तो दूसरी ओर नवीनता और प्रगति के भी पोषक। उन्होंने भारतीय संस्कृति के स्वरूप को ग्रहण किया, जो गतिशील है।"

गुप्त जी आधुनिक युग के श्रेष्ठ कवियों में हैं। उनकी प्रारंभिक रचनाओं में इतिवृन्त का सखापन है। पद्य में कही गयी इन कहानियों में भावात्मक सरसता का अभाव है। 'भारत-भारती' आदि प्रारम्भिक रचनाएँ ऐसी ही हैं। छायावाद के आगमन के साथ गुप्त जी की कविता में भी लाक्षणिकता वैचित्र्य और मनोभावों की सूक्ष्मता की मार्मिकता आयी। गुप्त जी का झुकाव भी गीतिकाव्य का समावेश करके गुप्त जी ने भाव-सौन्दर्य के मार्मिक स्थलों से परिपूर्ण 'यशोधरा' और 'साकेत' जैसी उत्कृष्ट काव्य कृतियों का सृजन किया। गुप्त जी के काव्य की यह प्रधन विशेषता है कि गीति-काव्य के तत्वों को अपनाने के कारण उसमें सरसता आयी है, पर प्रबंध की धरा की अपेक्षा नहीं हुई।

राष्ट्र प्रेम गुप्त जी की कविता का प्रमुख स्वर है। 'भारत-भारती' में प्राचीन भारतीय संस्कृति का प्रेरणा चित्रण हुआ है। इस रचना में व्यक्त स्वदेश प्रेम ही उनकी परवर्ती रचनाओं में राष्ट्र प्रेम और नवीन राष्ट्रीय भावनाओं में परिणत हो गया। उनका विश्वास है -

"जो भरा नहीं है भावो से बहती जिसमें रसधर नहीं है।"

वह हृदय नहीं है पत्थर है जिसमें स्वदेश का प्यार नहीं उनकी कविता में आज की समस्या और विचारों के स्पष्ट दर्शन होते हैं। गाँधीवाद तथा कहीं-कहीं आर्यसमाज का प्रभाव भी उन पर पड़ा है। अपने काव्यों की कथावस्तु गुप्त जी ने आज के जीवन से न लेकर प्राचीन इतिहास अथवा पुराणों से ली हैं। वे अतीत की गौरव गाथाओं को वर्तमान जीवन के लिए 'मानवतावादी' एवं नैतिक प्रेरणा देने के उद्देश्य से ही अपनाते थे। गुप्त जी की चिरत्र कल्पना में कहीं भी अलौकिकता के लिए स्थान नहीं है। उनके समस्त चरित्र मानव हैं, उसमें देव और दानव नहीं हैं। उनके राम, कृष्ण, गौतम आदि सभी प्राचीन और चिरकाल से हमारी श्रद्धा प्राप्त किए हुए पात्र हैं। इसलिए वे जीवन प्रेरणा और स्फूर्ति प्रदान करते हैं। 'साकेत' के राम 'ईश्वर' होते हुए भी तुलसी की भाँति आराधय नहीं, हमारे ही बीच के एक व्यक्ति हैं।

नारी के प्रति गुप्त जी का हृदय सहानुभूति और करूणा से आप्लावित है। 'यशोधरा', 'उर्मिला', 'कैकेयी', 'विघृता', 'रानकदे' आदि नारियाँ गुप्त जी की महत्वपूर्ण सृष्टि हैं।

टिप्पणी

गुप्त जी की भाव-व्यंजना में सर्वत्र ही जीवन की गंभीर अनुभूति के दर्शन होते हैं। उन्होंने कल्पना का आश्रय तो लिया है, परन्तु उनके भाव कहीं भी मानव की स्वाभाविकता का अतिक्रमण नहीं भी मानव की स्वाभाविकता का अतिक्रमण नहीं करते। गुप्त जी राम के अनन्य भक्त हैं। उन्होंने प्रकृति-चित्रण की लगभग सभी शैलियाँ अपनायी हैं। गुप्त जी ने अपने काव्य में विविध रसों की छटा बिखेरी हैं। परन्तु श्रृंगार, वीर, शान्त और करूण रस का विशेष परिपाक हुआ है। उनके काव्य में निम्नांकित प्रमुख विशेषताएँ दृष्टिगत होती हैं

1.11 भावपक्षीय विशेषताएँ

दिनकर जी ने कविता को छायावाद के सम्मोहन से मुक्त किया तथा उसमें राष्ट्रवादी और प्रगतिशील विचारों को स्थान दिया। दिनकर जी के काव्य की भावपक्षीय विशेषताएँ निम्नांकित हैं

रस योजना

गुप्त जी ने अपने काव्य में विविध रसों की छटा बिखेरी है। 'यशोधरा', 'शकुन्तला' आदि उनकी श्रृंगार पर आधरित उत्कृष्ट रचनाएँ हैं। 'साकेत' में श्रृंगार के दोनों पक्षों संयोग एवं वियोग का सुन्दर समन्वय देखने को मिलता है। उर्मिला प्रिय के वियोग में आरती के समान जलती रहती है

"मानस मन्दिर में सती, पति की प्रतिमा थाप।
जलती सी उस विरह में, बनी आरती आप॥"

इसी प्रकार 'भारत-भारती' तथा 'सिद्धराज' में वीर-रस का वर्णन मिलता है। अभिमन्यु के वध का समाचार सुनकर अर्जुन क्रोध के वशीभूत हो जाते हैं

"श्रीकृष्ण के सुन वचन अर्जुन क्रोध से जलने लगे,
सब शोक अपना भूलकर करतल युगल मलने लगे।
संसार देखे सब हमारे शत्रु रण में मृत पड़े,
करते हुए ये घोषणा वे हो गए उठकर खड़े॥"

मार्मिक स्थलों की परख एवं कोमल प्रसंगों की उद्‌भावना

कवि ने कविता कामिनी को प्रभावमयी बनाने के लिए अपने काव्य में ऐसे स्थलों का चयन किया है, जो पाठक के मनोभावों को झंकृत कर देते हैं। 'साकेत' में गुप्त जी ने चित्रकूट की राजसभा में कैकेयी द्वारा आत्म-प्रताड़ना की उद्‌भावना की है। कैकेयी स्वयं कहती है

"युग-युग तक चलती रहे कठोर कहानी,
रघुकुल में भी थी एक अभागिन रानी।"

प्रकृति चित्रण

गुप्त जी ने प्रकृति-चित्रण की लगभग सभी शैलियाँ अपनायी हैं। उन्होंने उद्दीपन रूप में भी प्रकृति के विभिन्न चित्र दर्शाएँ हैं और स्वतंत्र रूप में भी। 'पंचवटी' में प्रकृति का स्वतन्त्र चित्रण दर्शनीय है

"चारू चन्द्र की चंचल किरणें, खेल रही हैं जल थल में।
स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है, अवनि और अंबर-तल में॥
पुलक प्रकट करती है धरती, हरित तृणों को नोकों से।
मानो झूम रहे हों तरू भी, मन्द पवन के झोंकों से॥"

इनके काव्य में सन्ध्या, प्रात: रजनी, सागर ऋतु आदि का आलंकारिक चित्रण हुआ है।

टिप्पणी

1.12 कलापक्षीय विशेषताएँ

गुप्त जी के काव्य का कलापक्ष शैली छन्द तथा अलंकार आदि सभी दृष्टियों से समृद्ध है। इनके काव्य में भावनाओं का विस्तार एवं विविधता ही नहीं, अपितु अभिव्यक्ति का गाम्भीर्य भी विद्यमान है।

भाषा की सहजता

गुप्त जी ने जिस समय हिन्दी साहित्य क्षेत्र में प्रवेश किया उस समय खड़ी बोली ने काव्य का रूप ले लिया था; अत: गुप्त जी ने खड़ी बोली के सहज रूप को अपने काव्य का साधन बनाया। उनकी भाषा सरल, सुसंगठित प्रसाद तथा ओजगुण से युक्त है। गुप्त जी ने अपने काव्य में संस्कृत, अंग्रेजी, उर्दू तथा प्रचलित अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग किया है।

शैली की विविधता

गुप्त जी ने विविध शैलियों में काव्य रचना की है। 'साकेत', 'जयद्रथ वध', 'सिद्धराज' में प्रबन्धत्मक शैली प्रयुक्त की गयी है। 'हिन्दू' और 'गुरूकुल' अलंकृत उपदेशात्मक शैली के उदाहरण हैं। 'पंचवटीश. 'भारत-भारती' में विवरणात्मक शैली तथा 'यशोधरा', 'कुणालगीत', 'साकेत' आदि कारणों में नीति शैली का प्रयोग किया गया है। इसके अतिरिक्त 'चन्द्रहास', 'यशोधरा', 'साकेत', आदि में नाट्य शैली का प्रयोग भी कवि ने तन्मयता से किया है।

अलंकार प्रियता

गुप्त जी ने प्राय: सभी अलंकारों का प्रयोग किया है, किन्तु उन्हें सादृश्यमूलक अलंकार अधिक प्रिय हैं। यमक श्लेष और रूपक अलंकारों के प्रयोग में उनकी पाण्डित्य प्रवृत्ति का प्रदर्शन हुआ है।

छन्दों का माधुर्य

गुप्त जी का काव्य छन्दबद्ध है। उन्हें वर्णिक और मात्रिक दोनों प्रकार के छन्द पसन्द हैं। वर्णिक छन्दों में उन्होंने मालिनी, मन्दाकान्ता, बसन्त तिलका, द्रुतविलम्बित इत्यादि तथा मात्रिक छन्दों में दोहा सवैया, आर्या, ताटक, मनहरण, गीतिका आदि छन्दों से अपनी कविता-कामिनी का मधुरिम श्रृंगार किया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने उर्दू के गजल रूबाई आदि छन्दों का भी प्रयोग किया है।

हिन्दी साहित्य में

मैथिलीशरण गुप्त के राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत काव्य को भारतीय साहित्य में एक विशिष्ट स्थान प्राप्त है। महात्मा गांधी ने इनकी राष्ट्रीयता की भावना से ओत-प्रोत रचनाओं के आधर पर ही इन्हें 'राष्ट्रकवि' की उपाधि से विभूषित किया था। हिन्दी काव्य को श्रृंगार रस की दलदल से निकालकर इसमें राष्ट्रीय भावों की पुनीत गंगा को बहाने का श्रेय गुप्त जी को ही है।

इस प्रकार गुप्त जी के काव्य में भाव और कला का मणिकाँचन संयोग है। वे खटी बोली के निर्माता और उन्नायक कवियों में से हैं। गुप्त जी युग प्रतिनिधि कवि हैं। गुप्त जी ने भारतीय जीवन को विविध प्रकार से चेतनामय बनाया तथा अपने काव्य में युगीन समस्याओं को प्रस्तुत करके उनका समाधन भी किया।

उपर्युक्त विवेचन के आधर पर हम कह सकते हैं कि यद्यपि भारत में 'राष्ट्रकवि' के नाम से प्रदान की जाने वाली कोई उपाधि नहीं है, तथापि राष्ट्रोत्थान के आवश्यक तत्व (विशेषताएँ) मैथिलीशरण गुप्त के काव्य में पाए जाते हैं; इसलिए उन्हें 'आधुनिक युग का 'राष्ट्रकवि' कहा जा सकता है।

टिप्पणी

1.13 अभ्यास प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. मैथिलीशरण गुप्त किस काल के कवि है?
2. गुप्त जी को किस रचना के आधर पर 'मंगला प्रसाद', 'पारितोषक' मिला?
3. गुप्त जी की दो प्रसिद्ध रचनाओं के नाम बताइये।
4. गुप्त जी की प्रमुख कृतियों का उल्लेख कीजिए।
5. 'गुप्त जी राष्ट्रकवि हैं' इस कथन की मीमांसा स्पष्ट कीजिए।

विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. गुप्त जी की काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।
2. "मैथिलीशरण गुप्त युग चेतना और उसके विकसित होते हुए रूप के प्रति सजग थे" स्पष्ट कीजिए।
3. गुप्त जी का जीवन परिचय जन्म-काल, समय, जन्म-स्थान, माता-पिता, शिक्षा-दीक्षा बिन्दुओं पर लिखिए।
4. गुप्त जी का जीवन परिचय साहित्यिक आवेदन पर लिखिए।
5. 'गुप्त जी ने खड़ी बोली को हिन्दी कविता के क्षेत्र में प्रतिष्ठित किया है।' इस कथन पर प्रकाश डालिए।

♦♦♦♦♦

इकाई 2

यशोधरा काव्य का सिद्धार्थ सर्ग

पाठ-संरचना

2.1 उद्देश्य
2.2 प्रस्तावना
2.3 'यशोधरा' के चयनित अंशों की व्याख्या
2.4 'साकेत' के चयनित अंशों की व्याख्या
2.5 सारांश
2.6 अभ्यास प्रश्न

टिप्पणी

2.1 उद्देश्य

मैथिलीशरण गुप्त और राम नरेश त्रिपाठी आधुनिक हिंदी कविता के अत्यंत प्रसिद्ध और प्रतिनिधि कवि हैं। दोनों कवियों के रचना-संसार से हिंदी काव्य समृद्ध हुआ है। इस इकाई में आप मैथिलीशरण की दो चर्चित और महत्वपूर्ण काव्य-कृतियों - 'यशोधरा' और 'साकेत' एवं रामनरेश त्रिपाठी की 'अन्वेषण' और 'वह देश कौन-सा है' के चयनित अंशों का पाठ करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- उल्लिखित कवियों की कविताओं की भाव-भूमि से परिचित हो सकेंगे
- कविताओं का रसास्वादन कर सकेंगे
- कवियों की भाषिक विशेषताएँ समझ सकेंगे
- इन कविताओं के माध्यम से कवि की चिंताओं की चर्चा कर सकेंगे
- इन कविताओं के काव्य-सौष्ठव का स्वरूप जान सकेंगे।

2.2 प्रस्तावना

मैथिलीशरण गुप्त (1886-1964) द्विवेदी युग के प्रतिनिधि कवि है। 'जयद्रथ-वध' और 'भारत भारती' के प्रकाशन से लोकप्रियता के शिखर पर पहुंचे मैथिलीशरण गुप्त को 1930 में महात्मा गांधी ने राष्ट्रकवि की उपाधि दी थी। उन्होंने प्राचीन आख्यानों को अपने काव्य का वर्ण्य विषय बनाकर उनके सभी पात्रों को एक नया अभिप्राय दिया है। जयद्रथवध, पंचवटी, सैरन्ध्री, बक संहार, द्वापर, नहुष, जयभारत, हिडिम्बा, विष्णुप्रिया, यशोधरा, साकेत एवं रत्नावली आदि रचनाएं इसके उदाहरण हैं। 'साकेत' महाकाव्य है तथा शेष सभी काव्य खंड काव्य के अंतर्गत आते हैं।

गुप्त जी ने कुछ नाटक भी लिखे हैं। इन नाटकों में अनघ, तिलोत्तमा, चरणदास, विसर्जन आदि उल्लेखनीय हैं। खड़ी बोली को काव्य भाषा का दर्जा और जन-जन तक पहुंचाने में मैथिलीशरण गुप्त की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण है। मैथिलीशरण गुप्त जी को साहित्य जगत में 'दद्दा' नाम से सम्बोधित किया जाता है।

रामनरेश त्रिाठी (1881-1962) मैथिली शरण गुप्त की 'भारत भारती' की भाषा और अभिव्यक्ति से अत्यंत प्रभावित हुए थे। इसी प्रभाव के फलस्वरूप उन्होंने खड़ीबोली में लिखना शुरू किया था। उन्होंने राष्ट्रप्रेम की कविताएँ लिखीं। इन्होंने कविता के अलावा उपन्यास, नाटक आलोचना, हिंदी साहित्य का संक्षिप्त इतिहास तथा बालोपयोगी पुस्तकें भी लिखीं। इनकी मुख्य काव्य कृतियाँ हैं- मिलन, स्वप्न, पथिक तथा मानसी। इनमें 'मानसी' फुटकर कविताओं का संग्रह है और शेष तीनों कृतियाँ प्रेमाख्यानक खंडकाव्य हैं। रामनरेश त्रिपाठी ने लोक गीतों के चयन के लिए सारे देश का भ्रमण किया। इनकी कविताओं के मुख्यत: दो विषय हैं- देशभक्ति और निर्धन जनता के प्रति सहानुभूति। उनकी कविताओं में राजभक्ति का अभाव तो है ही. तत्कालीन शासन व्यवस्था के प्रति तीव्र व्यंग्य भी परिलक्षित होता हैं।

2.3 'यशोधरा' के चयनित अंशों की व्याख्या

मैथिली शरण गुपत की काव्य कृति 'यशोधरा' के चयनित अंश का पाठ करने के पहले आपको यह जान लेना अनुचित न होगा यशोधरा एक खंडकाव्य है। इसमें राजकुमार सिद्धार्थ की पत्नी यशोधरा के मनोभावों का सुंदर चित्रण हुआ है। यशोधरा एक वियोगिनी नारी है। सिद्धार्थ उन्हें रात्रि में सोती हुई छोड़कर राजप्रसाद से चुपचाप संन्यास हेतु निकल जाते हैं। इससे यशोधरा का मन आहत हो जाता है। यशोधरा को इसी बात का दुख था कि उसेक पति ने यह समझ लिया होगा कि वह उनके मार्ग की

टिप्पणी

बाध बनेगी इसीलिए उसे बिना बताएं घर छोड़कर चले गये। यशोधरा का कहना है कि यदि वे उस पर विश्वास करते और गृहत्याग की बात बता देते तो वह उन्हें पूरा सहयोग देती।

अब आप कवितांश का वाचन कीजिए:

एक

सिद्धि हेतु स्वामी गये, यह गौरव की बात,
पर चोरी-चोरी गये, यही बड़ा व्याघात,
सखि, वे मुझसे कह कर जाते,
कह, तो क्या मुझको वे अपनी पथ-बाध ही पाते?
मुझको बहुत उन्होंने माना,
फिर भी क्या पूरा पहचाना?
मैंने मुख्य उसी को जाना,
जो वे मन में लाते।
सखि, वे मुझसे कह कर जाते।
स्वयं सुसज्जित करके क्षण में,
प्रियतम को, प्राणों के पण में,
हमीं भेज देती हैं रण में
क्षात्र-धर्म के नाते।
सखि, वे मुझसे कर कर जाते।
हुआ न यह भी भाग्य अभागा,
किस पर विफल गर्व अब जाग?
जिसने अपनाया था, त्यागा,
रहे स्मरण ही आते।
सखि, वे मुझसे कह कर जाते।
नयन उन्हें हैं निष्ठुर कहते,
पर इनसे जो आँसू बहते,
सदय हृदय वे कैसे सहते?
गये तरस ही खाते।
सखि, वे मुझसे कह कर जाते।
जायें सिद्धि पावें वे सुख से,
दुखी न हों इस जन के दुख से,
उपालम्भ हूँ मैं किस मुख से?

टिप्पणी

आज अधिक वे भाते।

गये, लौट भी वे आयेंगे,

कुछ अपूर्व अनुपम लायेंगे,

रोते प्राण उन्हें पायेंगे,

पर क्या गाते गाते?

सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

गये लौट भी वे आयेंगे,

कुछ अपूर्व अनुपम लायेंगे,

रोते प्राण उन्हें पायेंगे,

पर क्या गाते गाते?

सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

व्याख्याः एक आइए चयनित अंशों की विस्तृत व्याख्या से परिचय प्राप्त करते हैं

सिद्धि हेतु स्वामी गए, यह गौरव की बात,

पर चोरी-चोरी गए, यही बड़ा व्याघात,

सखी, वे मुझसे कह कर जाते

कह, तो क्या मुझसे वे अपनी पथ-बाध ही पाते?

संदर्भ और प्रसंगः प्रस्तुत पंक्तियाँ मैथिली शरण गुप्त द्वारा रचित 'यशोधरा' से उद्धत हैं। सिद्धार्थ गौतम अपनी पत्नी यशोधरा और पुत्र राहुल को निद्रावस्था में छोड़कर संन्यास धर्म अपनाने और सिद्धि प्राप्त करने हेतु वन में चले गए। इसके पश्चात यशोधरा इस प्रसंग में दुखी होकर सखी से मन की बात कह रही है।

व्याख्या : सिद्धार्थ अपने जीवन के सत्य की खोज में संसार के सुखों का त्याग करके वन में चले गए। जन कल्याण हेतु उनका सत्य की खोज में चले जाना निश्चय ही गौरव और अभिमान की बात है। परंतु यशोधरा कह रही हैं कि वे उनसे छुपकर चले गए, इसीलिए उसे बहुत दुख हुआ। यदि वे कहकर जाते तो वह उन्हें रोक नहीं लेतीं, उनके मार्ग कि बाध नहीं बनती। लेकिन सिद्धार्थ ने ऐसा नहीं किया, इसलिए यशोधरा को बहुत कष्ट होता है।

विशेषः

1. 'बड़ा व्याघात' में अनुप्रास, 'चोरी-चोरी' में पुनरुक्तिप्रकाश एवं तो क्या.... पथबाध ही पाते' में प्रश्न अलंकार है।
2. स्त्री को सबसे अधिक दुख यह जानकर होता है कि उसका पति उस पर अविश्वास करता है। पति पूर्ण विश्वास की अधिकारिणी नहीं समझता हैं।
3. इन काव्य-पंक्तियों की भाषा तत्सम प्रधन खड़ी बोली हिंदी है।

दो

मुझको बहुत उन्होने माना

फिर भी क्या पूरा पहचाना?

मैंने मुख्य उसी को जाना,

जो वे मन में लाते

सखी, वे मुझसे कह कर जाते।

संदर्भ तथा प्रसंग : उपरोक्त पंक्तियाँ मैथिली शरण गुप्त की बहुचर्चित काव्यकृति 'यशोधरा' से अवतरित हैं। सिद्धार्थ गौतम अपनी पत्नी यशोधरा और पुत्र राहुल को निद्रावस्था में छोड़कर संन्यास ध र्म अपनाने और सिद्धि प्राप्त करने हेतु वन में चले गए। इसके पश्चात यशोधरा गौतग के इस आचरण से अत्यंत दुखी होकर अपनी मनोभावनाएँ प्रकट करती है। उसकी मनोदशा का सुंदर चित्रण गुप्त जी ने किया है।

व्याख्या: यशोधरा अपने गृहस्थ-जीवन की स्मृतियों को याद करते हुए कह रही हैं कि उनके पति से उन्हें अत्यधिक स्नेह, प्रेम और दुलार मिला है। वे उन्हें बहुत मानते भी रहे हैं। यशोधरा के मन में एक सवाल गूंजता है कि क्या वास्तव में उनके पति उन्हें पहचानते भी हैं? यदि वे उन्हें भली-भांति पहचानते तो इस तरह रात के अंधेरे में चोरी-छुपे वन चले नहीं गए होते बल्कि उन्हें कहकर ही निकले होते। पुन: वे कहती हैं कि उन्होंने आज तक वही किया जो उन्हें पसंद रहा, जो उन्हें रूचिकर प्रतीत हुआ। वह मुख्यत: उसी बात को जान पाती थीं उनके मन में रहती थी। बेहतर होता कि वे यशोधरा से कहकर जाते। ऐसा होने पर यशोधरा को कोई मानसिक कष्ट न होता और उन्हें खुशी भी होती कि सिद्धार्थ उनकी मनोभावनाओं को समझते हैं। इससे यशोधरा का आत्म-सम्मान भी बना रहता। वह कभी भी उनकी राह की बाध न बनती, बल्कि उनके मार्ग को प्रशस्त करने में सहायता कर सकती थी।

विशेष:

1. उपरोक्त अंश में विरहिणी यशोधरा की मनोव्यथा का चित्रण हुआ है।
2. स्त्री के प्रति पुरूष की हीन मनोवृत्ति का परिचय मिलता है।
3. गृहस्थ जीवन की स्मृतियों का स्मरण हुआ है।
4. उपेक्षित और विरहिणी नारी के आत्मसम्मान को कवि ने प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया है।
5. खड़ी बोली कविता का सहज और स्वाभाविक रूप विद्यमान है।
6. नाटक, गीत, प्रबंध, पद्य और गद्य सभी के मिश्रण एक मिश्रित शैली में 'यशोधरा' की रचना हुई है।

तीन

स्वयं सुसज्जित करके क्षण में,

प्रियतम को, प्राणों के पण में,

हमीं भेज देती हैं रण में

क्षात्र-धर्म के नाते।

सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

हुआ न यह भी भाग्य अभागा,

किस पर विफल गर्व अब जागा?

टिप्पणी

जिसने अपनाया था, त्यागा,

रहे स्मरण ही आते।

सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या : यशोधरा कहती है कि भारतीय नारी का इतिहास रहा है कि उसे क्षत्रिय कुल धर्म का पालन करना आता है। प्राचीन काल से स्त्री अपने पति को अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित करके युद्ध क्षेत्र में भेजती रही है। उस युद्धक्षेत्र में हां प्राणों की होड़ लगी रहती है। मंगल टीका लगाकर उनकी विजय कामना करते हुए उन्हें युद्ध क्षेत्र में जाने के लिए प्रेरित करती रही हैं। जिस नारी की यह परंपरा रही है भला वह सिद्धि प्राप्ति हेतु वन में जानेवाले पति की राह का रोड़ा बनकर क्यों खड़ी होती? सिद्धि हेतु गमन करने वाले पति को भला वह रोक सकती है? कहने का आशय यह है कि यशोधरा अपने पति के मार्ग की बाध बनकर कदापि खड़ी नहीं चाहती थी।

विशेषः

1. उपरोक्त अवतरण में भारतीय स्त्री के क्षत्राणी कुल की परंपरा का उल्लेख मिलता
2. भारतीय स्त्री की अविचलता का उदाहरण प्रस्तुत किया गया है।
3. विरहिणी स्त्री की मनोदशा का जीवंत चित्रण किया गया है।
4. उपेक्षित और विरहिणी नारी के आत्मसम्मान को कवि ने प्रभावशाली ढंग से चित्रित किया है।
5. खड़ी बोली कविता का सरल और सहज रूप विद्यमान है।
6. तत्सम प्रधन भाषा की प्रवाहशीलता देखते ही बनती है।
7. 'स्वयं सुसज्जित', 'प्रियतम-प्राणों-पण -परण' में अनुप्रास अलंकार है।

चार

सखि, वे मुझसे कह कर जाते.....आज अधिक वे भाते।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या : उद्धृत अंश में यशोधरा अपनी शारीरिक दशा का वर्णन करते हुए कहती है कि आँखें उन्हें निष्ठुर कहती हैं क्योंकि उन्होंने नेत्रों को बिना बतलाए इस प्रकार त्याग दिया है, परंतु, नेत्रों से बहनेवाली अश्रुधरा को वे दयालु हृदय भला किस प्रकार सह सकते थे। इसलिए उन्होंने चोरी-चोरी गृह-त्याग करना ही उपयुक्त समझा। यशोधरा का विचार है कि सिद्धार्थ ने वन जाकर उसके प्रति अच्छा ही आचरण किया। वे सुखपूर्वक सिद्धि प्राप्त करें। कभी भी यशोधरा के दुख से वे पीड़ित न हों। यशोधरा उन्हें किसी भी प्रकार उलाहना नहीं देना चाहती हैं। इस विरहावस्था में भी वे अधिक प्रिय लग रहे हैं, क्योंकि उन्होंने संसार के कल्याण हेतु यह त्याग किया है।

विशेष :

1. मैथिली शरण गुप्त ने अवतरित अंश में सिद्धार्थ के प्रति यशोधरा के अमलिन प्रेम का चित्रण किया है। इस प्रेम चित्रण से गुजरते समय हमें गोपियों का कृष्ण प्रेम स्मरण हो आता है। प्रेम में प्रियतम की उद्देश्य और लक्ष्य प्राप्ति की कामना और अपनी स्थिति की परवाह न करना प्रेम को उदात्त बनाता है।

2. अवतरित अंश में नारी का त्याग चित्रित हुआ है।
3. प्रेम भाव में प्रियतम का दोष न ढूँढना और उनसे किसी प्रकार की कोई शिकायत न करना तटस्थता नहीं बल्कि प्रेम की परिपक्वता है।
4. बृहत्तर प्रेम हेतु निजी प्रेम को त्यागने की भावना तत्कालीन युग स्पंदन का प्रतीक
5. भाषा की सरलता और सहजता पर कवि का पूरा ध्यान रहा है।
6. तुक के प्रति कवि का ध्यान परिलक्षित होता है।
7. नाटक, गीत, प्रबंध, पद्य और गद्य सभी के मिश्रण एक मिश्रित शैली में 'यशोधरा' की रचना हुई है।

व्याख्या : पाँच गये, लौट भी वे आयेंगे............सखि, वे मुझसे कह कर जाते।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या : कविता के अंतिम भाग में यशोधरा की स्पष्ट मान्यता है कि उनके पति भले ही अभी गृहा-त्याग किया है लेकिन उन्हें सिद्धि अवश्य प्राप्त होगी। इस सिद्धि प्राप्ति के पश्चात उनका पनरागमन होगा और तभी यशोधरा के व्यथित प्राण उन्हें प्राप्त कर सकेंगे। उनके दर्शन करेंगे। यह सिद्धि उनसे अधिक संपूर्ण लोक के कल्याण हेतु फलप्रसू होगी।

विशेष :

1. गुप्त जी ने भारतीय नारी के अपूर्व उज्जवल जीवन की एक मधुर झलक दिखाई है। विलासिता से दूर भारतीय स्त्री अपने पति को पूर्णतया सहयोग प्रदान करती है। यदि इसे परंपरा कहें तो 'सखि वे मुझसे कहकर जाते' में उसका आत्मसम्मान, स्वाभिमान छिपा हुआ है जो नवीनता का सूचक है। इस तरह से यशोधरा में प्राचीनता और नवीनता का सुंदर समन्वय साधित हुआ है। तत्कालीन भारतीय संदर्भ पर ध्यान के. न्द्रित करें तो पाते हैं कि गांधीजी ने अधिक अधिक से संख्या में स्त्रियों को भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में भाग लेने के लिए आह्वान किया था। इस दृष्टि से यशोधरा का चरित्र और व्यक्तित्व विशेष प्रासंगिक है।
2. बृहत्तर प्रेम हेतु निजी प्रेम को त्यागने की भावना तत्कालीन युग स्पंदन का प्रतीक
3. भाषा की सरलता और सहजता पर कवि का पूरा ध्यान रहा है।
4. तुक के प्रति कवि का ध्यान परिलक्षित होता है।

इस संदर्भ में आचार्य हजारी द्विवेदी का कथन दृष्टव्य है- "मैथिलीशरण गुप्त ने संपूर्ण भारतीय पारिवारिक वातावरण में उदात्त चरित्रों का निर्माण किया है। उनके काव्य शुरू से अंत तक प्रेरणा देने वाले हैं। उनमें व्यक्तित्व का स्वतः समुच्छित उच्छ्वास नहीं है, पारिवारिक व्यक्तित्व का और संयत जीवन का विलास है। वस्तुतः गुप्तजी पारिवारिक जीवन कथाकार है। परिवार का अस्तित्व नारी के बिना असंभव है। इसीलिए वे नारी को जीवन का महत्वपूर्ण अंग मानते हैं। नारी के प्रति उनकी दृष्टिरोमानी न होकर मर्यादावादी और सांस्कृतिक रही है। वे अपने नारी पात्रों में उन्हीं गणों की प्रतिष्ठा करते हैं. जो भारतीय कलवध के आदर्श माने गये हैं। उनकी दृष्टि में नारी भोग्य मात्र नहीं अपितु पुरूष का पूरक अंग है। इसीलिए उनके काव्य में नारी के स्वतंत्र व्यक्तित्व स्वाभिमान, दर्प और स्वावलम्बन का समुचित चित्रण हआ है। उनके काव्य में नारी, अधिकारों के प्रति सजग, शीलवती, मेधविनी, समाजसेविका, साहसवती, त्यागशीलता और तपस्विनी के रूप में उपस्थित हुई है।"

टिप्पणी

मैथिली शरण गुप्त ने संयुक्त परिवार को सर्वोपरि महत्व दिया है। उन्होंने नैतिकता और मर्यादा से युक्त सहज सरल पारिवारिक व्यक्ति को श्रेष्ठ माना हैं। नर-नारी के प्रति गुप्तजी की पूर्ण आस्था है। इस आस्था के दर्शन उनके काव्य में देखे जा सकते हैं। आस्था की टूटन गुप्तजी के लिए अहसनीय है। उन्हें नारी के प्रति पुरूष का अनुचित आचरण कदापि स्वीकार नहीं है।

2.4 'साकेत' के चयनित अंशों की व्याख्या

आप जानते हैं कि 'साकेत' मैथिली शरण गुप्त द्वारा रचित एक महाकाव्य है। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी गुप्त जी के साहित्यिक गुरु थे। उनकी प्रत्यक्ष प्रेरणा से 'साकेत' की रचना हुई है। इस महाकाव्य के केंद्र में उर्मिला है। महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के निबंध 'कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता' पढ़ने के बाद एक लंबे अरसे तक इस महाकाव्य की रचना में कवि ने अपने को नियोजित किया। 'साकेत' में लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला के विरह को अत्यंत मार्मिकता के साथ नवां सर्ग में अंकित किया गया है। इसके अतिरिक्त कैकेयी के चरित्र पर लगे कलंक पर नए सिरे से विचार करते हुए वि ने उनके मातृत्व को चित्रित किया है। आपके लिए चुने गए अंश में सीता का वर्णन हुआ है। ध्यान दें कि कवि ने रामकथा की पुनरावृत्ति के उद्देश्य से 'साकेत' की रचना नहीं की है। आप देख पाएंगे कि इसमें कवि ने अपने समय की स्थितियों और चेतनाओं का भी सावेश किया है। आपका अध्येतव्य विषय 'साकेत' के अष्टम सर्ग से अवतरित किया गया है। इस सर्ग में सीता-राम के चित्रकूट का जीवन, भरत के साथ अयोध्यावासियों का राम को मनाना, कैकेयी का अनुताप, लक्ष्मण-उर्मिला का मिलन और अंत में राम की पादुका लेकर भरत के लौटने का प्रसंग वर्णित है। बहरहाल आपके लिए 'साकेत' के चयनित अंश का ध्यानपूर्वक अध्ययन करें:

निज सौध सदन में उटज पिता ने छाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।
सम्राट स्वयं प्राणेश, सचिव देवर है,
देते आकर आशीष हमें मुनिवर है।
धन तुच्छ यहाँ-यद्यपि असंख्य आकर हैं,
पानी पीते मृग-सिंह का एक तट पर हैं।
सीता रानी को यहाँ लाभ ही लाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।
क्या सुन्दर-लता-वितान तना है मेरा,
पुजाकृति गुंजित कुंज घना है मेरा।
जल निर्मल, पवन पराग-सना है मेरा,
गढ़ चित्रकूट -दृढ़-दिव्य बना है मेरा।
प्रहरी निर्झर, परिखा प्रवाह की काया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।
औरों के हाथों यहाँ नहीं पलती हूँ,
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ।

श्रमवारिबिन्दुफल स्वास्थ्यमुक्ति फलती हूँ,
अपने अंचल से व्यंजन आप झलती हूँ।
तनु-लता-सफलता-स्वादु आज ही आया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।
यशोधरा काव्य का सिद्धार्थ सर्ग
जिनसे ये प्रणयी प्राण त्राण पाते हैं,
जो भरकर उनको देख जुड़ा जाते हैं।
जब देव कि देवर विचर-विचार आते हैं,
तब नित्य नये दो-एक द्रव्य लाते हैं।
उनका वर्णन ही बना विनोद सवाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।
किसलय-कर स्वागत-हेतु हिला करते हैं,
मृदु मनोभाव-सम सुमन खिला करते हैं।
डाली में नव फल नित्य मिला करते हैं
तृण तृण पर मुक्ता-भार झिला करते हैं।
निधि खोले दिखला रही प्रकृति निज माया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।
कहता है कौन कि भाग्य ठगा है मेरा?
वह सुना हुआ भय दूर भगा है मेरा।
कुछ करने में अब हाथ लगा है मेरा,
वन में ही तो गार्हस्थ जगा है मेरा।
वह वधु जानकी बनी आज यह जाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।
फल-फूलों से हैं लदी डालियाँ मेरी,
वे हरी पत्तलें, भरी थालियाँ मेरी।
मुनि बालाएँ हैं यहाँ आलियाँ मेरी,
तटिनी की लहरें और तालियाँ मेरी।
क्रीड़ा-सामग्री बनी स्वयं निज छाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।
मैं पली पक्षिण विपिन-कुंज-पिंजर की,
आती है कोटर-स-श मुझे सुध घर की।

टिप्पणी

मृदु-तीक्ष्ण वेदना एक एक अन्तर की,
बन जाती है कल-गीति समय के स्वर की।
कब उसे छेड़ यह कण्ठ यहाँ न अघाया?
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।
गुरुजन-परिजन सब धन्य ध्येय हैं मेरे,
औषधियों के गुण-विगुण ज्ञेय हैं मेरे
वन-देव-देवियाँ आतिथेय हैं मेरे,
प्रिय-संग यहाँ सब प्रेय श्रेय है मेरे।
मेरे पीछे ध्रुवश5-धर्म स्वयं ही धया,
मेरे कुटिया में राज-भवन मन भाया।
नाचो मयूर, नाचो कपोत के जोड़े।
नाचो कुरंग, तुम लो उड़ान के तोड़े।
गाओ दिवि, चातक चटक, भृग भय छोड़े
वैदेही के वनवास-वर्ष हैं थोड़े।
तितली, तूने यहा कहाँ चित्रपट पाया?
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।
आओ कलापि निज चन्द्रकला दिखलाओ
कुछ मुझसे सीखो और मुझे सिखलाओ।
गाओ पिंक, मैं अनुकरण करूँ, तुम गाओ,
स्वर खींच तनिक यों उसे घुमाते जाओ।
शुक पढ़ो- मधुर फल प्रथम तुम्हीं ने खाया,
मेरी कुटिया में राज-भवन मन -भाया।
अयि राजहंसि, तू तरस क्यों रोती,
तू शुक्ति-वंचिता कहीं मैथिली होती।
आइए चयनित अंशों की विस्तृत व्याख्या करते हैं:

एक

औरों के हाथों नहीं यहां पलती हूँ
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ
श्रमवारि बिन्दु फल स्वास्थ्य मुक्ति फलती हूँ
अपने अंचल से व्यजन आ झलती हूँ

यशोधरा काव्य का सिद्धार्थ सर्ग

तनु-लता-सफलता- स्वादु आज ही लाया।

मेरे कुटिया में राज-भवन मन भाया।

संदर्भ और प्रसंग : प्रस्तुत पंक्तियाँ मैथिलीशरण गुप्त की रचना 'साकेत' से ली गई हैं। 'साकेत' में गुप्तजी ने रामकथा को आधर बनाया है। किन्तु उनका उद्देश्य एक कथा को दोहराना नहीं है। बल्कि इस कथा के माध्यम से वह आधुनिक युग की जरूरतों, परिस्थितियों और समस्याओं की अभिव्यक्ति और समाधन प्रस्तुत करते हैं। यही कारण है कि इन पंक्तियों में राजरानी सीता को स्वावलंबी रूप से प्रस्तुत किया गया है। महलों के सुख साधनों को छोड़कर वन में आई सीता अपनी स्थिति से प्रसन्न और संतुष्ट है। राजभवन के भोग विलास की तुलना में वन का यह स्वच्छन्द और प्रद्भत जीवन उसे भाता है इसीलिए वह कहती है।

व्याख्या : वन में मैं औरों के हाथों नहीं पलती यानी दास-दासियों की सेवा पर आध रित नहीं हूँ बल्कि अपना काम स्वयं करती हूँ। अपने पैरों पर चलने का अर्थ है कि अब मैं स्वावलंबी हूँ। यहां पंखा झलने वाली दासियां नहीं हैं। इसीलिए मैं अपने आँचल से स्वयं अपने ऊपर पंखा झलती हूँ यह स्वावलंबन मेरे लिए बड़ा ही उपयोगी है क्योंकि श्रम करके जो पसीना बहाती हूँ उसका समुचित फल भी मुझे मिलता है। यानी परिश्रम करने के कारण मुझे स्वास्थ्य लाभ होता है। शारीरिक श्रम से मिलने वाले आनंद को मैंने आज ही जाना है। इसीलिए मुझे अपनी कुटिया में किसी तरह का अभाव नहीं महसूस होता बल्कि राजभवन जैसा ही आनंद मिलता है। यह कुटिया मेरे मन को राजभवन से भी अधिक भाती है क्योंकि इसने मुझे स्वावलंबी बनाया और मैं मन चाहा कार्य स्वयं कर सकती हूँ।

विशेषः

1. इन पंक्तियों में लेखक ने स्वालंबन का महत्व बताया है जो गांधी युग की विशेषता
2. सीता के पारंपरिक देवी रूप की बजाय उसे मनुष्य रूप में प्रस्तुत किया गया है।
3. खड़ी बोली कविता का सहज और सुंदर रूप इन पंक्तियों में मौजूद है। संस्कृत की तत्सम शब्दावली का प्रयोग है।

दो

किसलय -कर स्वागत-हेतु हिला करते हैं,

मृदु मनोभाव-सम सुमन खिला करते हैं।

डाली में नव फल नित्य मिला करते हैं

तृण तृण पर मुक्ता-भार झिला करते हैं।

निधि खोले दिखला रही प्रकृति निज माया,

मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

संदर्भ और प्रसंग : उपर्युक्त कवितांश मैथिली शरण गुप्त के महाकाव्य 'साकेत' के अष्टम सर्ग से लिया गया है। राम-सीता और लक्ष्मण को अयोध्या लौटा लेने के लिए अयोध्या के निवासी चित्रकूट पहुंचे हुए हैं। कवि ने सीता के माध्यम से चित्रकूट की प्राकृतिक सुषमा का चित्रण किया है।

व्याख्या : चित्रकूट की अपरूप शोभा का चित्रण करते हुए सीता कहती हैं कि नए और कोमल पत्ते स्वागत हेतु अपने हाथ हिला करते हैं। मनुष्य के कोमल मनोभाव प्रकट करने के लिए मानो फूल खिला करते हैं। चित्रकूट फलों से लदा हुआ है। इसलिए डाली में नित्य नए फल भरे रहते हैं। तृण

टिप्पणी

–तृण पर ओस की बूंदें मुक्ता सदृश झिलमिलाते रहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि प्रकृति ने अपना अमाप रत्न–भंडार उन्मुक्त कर दिया है। वह अपनी माया से जड़–चेतन सबको मंत्रमुग्ध किए जा रही है। इसीलिए मुझे अपनी कुटिया में किसी तरह का अभाव नहीं महसूस होता बल्कि राजभवन जैसा ही आनंद मिलता है।

विशेष :

1. उपर्युक्त अंश की पहली पंक्ति में कवि ने मानवीकरण का सुंदर प्रयोग किया है।
2. प्रकृति की नैसर्गिक सुषमा का मनोरम चित्रण हुआ है।
3. मानव और प्रकृति के अभिन्न संबंध को भी इस पद से जाना जा सकता है।
4. सीता के पारंपरिक देवी रूप की बजाय उसे मनुष्य रूप में प्रस्तुत किया गया है।
5. खड़ी बोली कविता का सहज और सुंदर रूप इन पंक्तियों में मौजूद है।
6. किसलय, स्वागत, मृदु, तृण, मुक्ता, निधि, प्रकृति जैसे तत्सम शब्दों का प्रयोग है।

तीन

गुरुजन–परिजन सब धन्य ध्येय हैं मेरे,
औषधियों के गुण–विगुण ज्ञेय हैं मेरे
वन–देव–देवियाँ आतिथ्य हैं मेरे,
प्रिय–संग यहाँ सब प्रेय श्रेय है मेरे।
मेरे पीछे ध्रुव –धर्म स्वयं ही धया,
मेरी कुटिया में राज–भवन मन भाया।

संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत

व्याख्या : चित्रकूट की शोभा और सम्पदा से सीता गदगद हैं। सीता अपने गुरुजनों और आत्मीय लोगों को धन्य समझती हैं जो उनके ध्येय में हैं। औषधीय गुणों से परिपूर्ण पेड़–पौधें को सीता पहचान चुकी हैं। वन के देवी–देवताओं की आतिथ्यता से वे परम प्रसन्न है। सबसे बड़ी बात यह है कि सीता अपने पति के साथ हैं। इसलिए यहाँ उन्हें सब कुछ उन्हें प्रिय लगता है। चित्रकूट का सब कुछ उन्हें श्रेष्ठ लगता है। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि चित्त प्रसन्न हो तो मनुष्य को दुख–कष्ट भी नहीं सालते। उसे सब कुछ प्रेममय और आनंदमय प्रतीत होता है। चित्रकूअ के सघन वन में भी सीता अने पति के साथ होने के कारण न केवल वह संतुष्ट हैं बल्कि परम प्रसन्न भी हैं। राम के साथ रहने का आशय है कि अटल धर्म भी उन्हीं का पीछा कर रहा है। इसीलिए सीता को धर्म–अधर्म की चिंता में चिंतित होने की क्या आवश्यकता है? सीता कहती हैं अर्थात कवि कहता है कि उन्हें अपनी कुटिया में किसी तरह का अभाव नहीं महसूस होता बल्कि राजभवन जैसा ही आनंद मिलता है।

विशेष :

1. इस पद में चित्रकूट पर्वत के औषधीय गुणवाले वृक्षों और लता–गुल्मों की प्रशंसा की गई है।
2. सीता के पारंपरिक देवी रूप की बजाय उसे मनुष्य रूप में प्रस्तुत किया गया है।
3. भारतीय परंपरा में विश्वास है कि पति के साथ पत्नी कहीं भी रहे तो उसे परम – संतोष की प्राप्ति होती है।

4. खड़ी बोली का सहज और स्वाभाविक प्रयोग मिलता है।

5. लोकविश्वास है कि वन में रहने वाले सभी प्राणियों की रक्षा वनदेवी और वनदेवता करते हैं।

(आपके के लिए 'साकेत' के अध्येतव्य पाठ में से तीन पदों की व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई हैं। आशा है कि अब आप 'साकेत' के अन्य पदों की व्याख्या स्वयं कर सकेंगे। दिये गए शब्दार्थ की सहायता ले सकते हैं।)

2.5 सारांश

- आपने मैथिली शरण गुप्त के दो प्रसिद्ध काव्य ग्रंथों के चयनित अंशों का पाठ किया। इन अंशों के माध्यम से आपने जाना कि कवि ने खड़ी बोली में काव्य रचना को संभव किया। इसे काव्य की भाषा बनाते हुए उन्होंने कविता की भाषा के संदर्भ में होने वाले तमाम विवादों को समाप्त किया। उपेक्षित स्त्री पात्रों को काव्य जगत में प्रतिष्ठित किया तथा कुछ मिथकीय पात्रों के संबंध में प्रचलित मान्यताओं को नए रूपों में प्रतिष्ठित किया। इनकी कविताओं में तत्कालीन देश-काल की प्रतिध्वनि स्पष्टतया सुनी जा सकती है। भारतीय जीवन आदर्श के महत्वपूर्ण तत्वों को उन्होंने काव्य के साँचे में ढाल कर तत्कालीन समाज को जीवन मूल्यों की ओर प्रेरित किया है। आपने यह भी देखा कि सीता हो या यशोधरा. इनमें त्याग और उत्सर्ग की भावना के साथ-साथ स्वाभिमान, स्वतंत्र चेतना आदि के भाव भी भरे हुए हैं। निस्संदेह, मैथिली शरण गुप्त हिंदी के प्रतिनिधि कवि हैं।
- यह इकाई पढ़ने के बाद पं. रामनरेश त्रिपाठी की काव्य संवेदना के बारे में आपकी एक अवधरणा का विकास हुआ होगा। परतंत्र भारत में आमजन में देश भक्ति अथवा राष्ट्र प्रेम की भावना उद्‌बुद्ध करना तत्कालीन रचनाकारों का मुख ध्येय था। इस संदर्भ में रामनरेश त्रिपाठी के महत्व को आप समझ सकते हैं। भारतीय प्रकति खेत, खलिहान, संपदा, इतिहास, संस्कृति एवं इतिहास-पुरुषों की स्मृति एवं प्रशस्ति में लिखी गई कविताओं में कवि की अनन्यता को भी आप रेखांकित कर सकते हैं। आपने यह भी समझा कि युगीन परिवेश में भटके लोगों को कवि ने किस खूबी से सन्मार्ग दिखाया और पथ-प्रदर्शक की भूमिका निभाई है।

2.6 अभ्यास प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. 'यशोधरा' के दुख का कारण क्या है? अपने शब्दों में लिखिए।
2. यशोधरा की कोई दो चारित्रिक विशेषताएँ स्पष्ट कीजिए।
3. चित्रकूट में पक्षी जगत से सीता के संबंध का परिचय दीजिए।
4. चित्रकूट के प्राकृतिक सौंदर्य पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
5. पठित कविताओं के आधर पर मैथिलीशरण गुप्त की नारी चेतना का सोदाहरण विवेचन कीजिए।

विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. 'संदर्भ और प्रसंग : पूर्ववत'। संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।
2. 'साकेत' के चयनित अंशों की व्याख्या कीजिए।

टिप्पणी

3. 'यशोधरा' के चयनित अंशों की व्याख्या कीजिए।
4. 'यशोधरा' के सारांश अपने शब्दों में लिखिए।
5. नीचे दि गयी पंक्तियों की व्याख्या कीजिए।

औरों के हाथों नहीं यहां पलती हूँ
अपने पैरों पर खड़ी आप चलती हूँ
श्रमवारि बिन्दु फल स्वास्थ्य मुक्ति फलती हूँ
अपने अंचल से व्यजन आ झलती हूँ
यशोधरा काव्य का सिद्धार्थ सर्ग
तनु-लता-सफलता- स्वादु आज ही लाया।
मेरे कुटिया में राज-भवन मन भाया।

♦♦♦♦♦

इकाई 3

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

पाठ-संरचना

3.1 उद्देश्य
3.2 प्रस्तावना
3.3 सूरदास
3.4 तुलसीदास
3.5 मैथिलीशरण गुप्त
3.6 सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
3.7 महादेवी वर्मा
3.8 सारांश
3.9 अभ्यास प्रश्न

टिप्पणी

3.1 उद्देश्य

आधर पाठयक्रम के खंड 3 की यह अंतिम इकाई है। इसमें आप कविताओं का अध्ययन करेंगे। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप:

- हिंदी काव्य-परंपरा की मुख्य प्रवृत्तियों को बता सकेंगे,
- सूरदास एवं तुलसीदास के काव्य के आधर पर भक्ति-काव्य की विशेषताएँ बता सकेगे,
- सूरदास एवं तुलसीदास की काव्यगत विशेषताएं बता सकेंगे,
- आधुनिक काव्य की विशेषताएँ बता सकेंगे,
- मैथिलीशरण गुप्त के काव्य की विशेषताएं बता सकेंगे,
- छायावाद की मुख्य विशेषताएँ बता सकेंगे, और
- निराला एवं महादेवी वर्मा के काव्य की विशेषताएँ बता सकेंगे।

3.2 प्रस्तावना

इस इकाई में हम आपको कुछ कविताएँ वाचन के लिए दे रहे है। सूरदास, तुलसीदास, मैथिलीशरण गुप्त, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' और महादेवी वर्मा की कुछ कविताओं के माध्यम से आप हिंदी की भक्तिपरक और आधुनिक कविताओं का संक्षिप्त परिचय प्राप्त करेंगे। हिंदी कविताओं का विस्तृत अध्ययन आप ऐच्छिक पाठयक्रम-02 में करेंगे।

कविता आरंभ से ही साहित्य की महत्वपूर्ण विध रही है। कविता के माध्यम से कवि अपने भावों और विचारों को व्यक्त करता है। कविता पद्यबद्ध होती है, लेकिन गद्य और पद्य किस बिंद पर अलग-अलग होते है, यह कहना मुश्किल है। लय को पद्य का मूल तत्व माना जाता है किंतु लयबद्ध होने से ही कोई रचना कविता नहीं हो जाती। फिर भी इतना तो कहा ही जा सकता है कि कीसी भी रचना में भावावेग, कल्पना और लालित्य (सौंदर्य) हो तो उसे कविता कहा जा सकता है।

कविता का विषय क्या हो, यह छंदोबद्ध हो या छंदमुक्त हो, उसकी भाषा बोलचाल के नजदीक हो या आलंकारिक हो, इस पर कोई भी निर्णय देना आसान नहीं है। वस्तुत: कविता की विषय-वस्तु और रचना-विधन उस युग की आवश्यकताओं से तय होते हैं। दो भिन्न-भिन्न युगों की रचनाओं के अध्ययन से आप समझ सकेंगे कि कविता की विषय-वस्तु ही नहीं, उसके शिल्प और भाषा में भी अंतर आ जाता है। आगे हम हिंदी काव्य-धरा के कुछ प्रतिनिधि कवियों की रचनाओं का अध्ययन करेंगे। इस अध्ययन से आप इस युग की काव्य-धरा की विशिष्टता और कवियों के रचनागत वैशिष्टय को पहचान सकेंगे। आप कविताओं की विषय-वस्तु, भाषा, छंद और शिल्प की विशेषताओं से भी परिचित होंगे।

3.3 सूरदास

हिंदी कविता का इतिहास लगभग एक हजार वर्ष पुराना है। इस एक हजार वर्ष में भिन्न भिन्न तरह की कविताओं के कई दौर आए। जैसे आरंभ में वीरता, शृंगार, धर्म आदि विभिन्न भावों को आधर बनाकर काव्य लिखा गया। इस आरंभिक युग (1000-1350 ई.) की कविता को कोई निश्चित नाम देना संभव नहीं है। वैसे इस युग के आदिकाल, आरंभिककाल, वीर गाथाकाल आदि अनेक नाम दिए गए। इनमें आदिकाल नाम ही अधिक प्रचलित है। बाद में भक्तिपरक रचनाओं का युग आया। भक्ति काव्य के बाद राजा-महराजाओं का मन बहलाने वाला दरबारी काव्य लिखा गया। इस काव्य की विषय

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

वस्तु अधिकांशतः श्रृंगार तक ही सीमित थी और काव्य की बनी-बनाई रूढ़ियों और रीतियों का ही इसमें पालन किया गया। इसलिए इसे रीति काव्य (1650-1850 ई.) कहा गया। इसके बाद आधुनिक चेतना और जीवन-मूल्यों से युक्त आधुनिक काव्य की शुरूआत हुई।

भक्ति काव्य : जैसा कि आप जानते होंगे कि सूरदास का संबंध भक्ति काव्य से है। ईश्वर के प्रति प्रेम की अनुभूति को भक्ति कहते हैं। लेकिन संपूर्ण भक्ति काव्य एक-सा नहीं है। जो भक्त-कवि ईश्वर को निर्गुण-निराकार मानते थे और अवतारवाद में विश्वास नहीं रखते थे, वे निर्गुणमार्गी भक्त कवि कहलाए। इनमें भी जिन्होंने धर्मिक रूढ़ियों और पाखंड पर चोट की, उन्हें ज्ञानमार्गी कहा गया। कबीर इस धरा के प्रमुख कवि थे। जिन कवियों ने लौकिक प्रेम-कथाओं के माध्यम से ईश्वर के प्रति प्रेम को अभिव्यक्ति दी, उन्हें प्रेममार्गी कहा गया। सफी कवि मलिक मोहम्मद जायसी इस धरा के प्रमख कवि थे। जो कवि ईश्वर को सग और साकार मानते थे और जो यह मानते थे कि ईश्वर अवतार लेता है और अपनी लीलाओं द्वारा लोक का मंगल करता है, वे सगुणमार्गी कहलाए। इनमें कृष्ण की लीलाओं पर आधरित काव्य की रचना करने वाले 'कृष्णोपासक' कवि कहलाए और जिन्होंने रामकथा पर आधरित काव्य की रचना की वे 'रामोपासक' कवि कहलाए। कृष्णोपासक काव्य-धरा के प्रमुख कवि सूरदास है और रामोपासक काव्य-धरा के प्रमुख कवि तुलसीदास है।

जीवन परिचय : महाकवि सूरदास का जन्म कब हुआ और वे कहाँ पैदा हुए, आज निश्चयपूर्वक यह कहना मुश्किल है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के अनुमान के अनुसार सूरदास का जन्म सन् 1483 और मृत्यु सन 1563 के आसपास हुई होगी। सन 1523 के आसपास के वल्लभाचार्य के शिष्य बने।

रचनाएँ : सूरदास की लिखी हुई कई कृतियों का उल्लेख किया जाता है। किंतु उनकी प्रामाणिक कृतियाँ दो ही कही जाती हैं- 'सूरसागर' और 'सूरसारावली'। एक अन्य पुस्तक 'साहित्य लहरी' का भी उल्लेख मिलता है, किंतु उसकी प्रामाणिकता पर संदेह किया जाता है।

पृष्ठभूमि : सूरदास भक्ति आंदोलन के दौर के कवि थे। उस काल में वीरगाथात्मक ओर श्रृंगारपरक रचनाओं को महत्व नहीं दिया जाता था। ईश्वरीय भक्ति से प्रेरित होकर जो रचनाएँ की जाती थी उन्हें ही श्रेयस्कर माना जाता था। सूरदास पर आरंभ में दैन्य भक्ति (ईश्वर के प्रति अपनी दीनता व्यक्त करना) का प्रभाव था, किंतु महाप्रभु वल्लभाचार्य से प्रेरित होकर वे कृष्ण लीला के गायन की ओर उन्मुख हुए। कृष्ण-लीला में भी उनका झुकाव बाल-लीला, किशोखय से संबंधित लीलाएँ, राध एवं गोपिकाओं के प्रति उनके प्रेम (संयोग और वियोग) का वर्णन ही मुख्य विषय रहा है।

काव्य-वाचन

यहाँ हमने बाल वर्णन, विनय और वियोग (भ्रमर गीत) से संबंधित तीन पद दिए है। आगे आप इन पदों का वाचन करेंगे। ये पद ब्रजभाषा में हैं। इसलिए इन्हें समझने में आपको कठिनाई आ सकती है। इसको ध्यान में रखते हुए कठिन शब्दों के अर्थ नीचे दिए गए हैं।

बाल लीला : पहला पद बाल लीला का है। सूरदास ने कृष्ण की बाल लीलाओं का मनोहारी चित्रण किया है। घुटनों के बल चलते हुए कृष्ण की बाल चेष्टाएँ, मक्खन लेने के लिए मचलते कृष्ण, अपनी क्रीड़ाओं द्वारा नंद और यशोदा को रिझाते और पुलकित करते हुए कृष्ण इस प्रकार के पदों के प्रमुख विषय बने हैं। निम्नलिखित पद में भी कृष्ण का ऐसा ही मनोहारी रूप वर्णित हुआ है। धुल से भरे, मुख पर दही का लेप किए और हाथों में मक्खन लिए कृष्ण के इस रूप पर सूरदास स्वयं मोहित हैं

सोभित कर नवनीत लिए।

चारु कपोल, लोल लोचन, गोरोचन तिलक दिए।

टिप्पणी

लट लटकनि मनुश मत्त मधुप गन मादक मधुहिं पिए।।

कठुला कंठ ब्रज केहरि नख, राजत रुचि हिए।

धन्य सूर एको पल इहिं सुख, का सत कल्प जिए।।

(1) ताजा मक्खन (2) धूल (3) दही (4) सुंदर (5) चंचल (6) पीले रंग का एक प्रकार का सुगंधित पदार्थ जो गाय के पित्त से निकलता है (7) मानो (8) भ्रमर (9) बच्चों को पहनायी जाने वाली माला (10) सिंह का नख (11) सुशोभित (12) सौ कल्प (पुराणों में ब्रह्मा के एक दिन को व्यक्त करने वाला शब्द)

विनय पद : सूरदास आरंभ में दैन्य भक्ति के अनुकूल पद रचते थे। दैन्य भक्ति में कवि ईश्वर के सामने अपनी दीनता का इजहार करता है। वह अपने को पापी और दीन मानता है और ईश्वर को सर्वशक्तिमान तथा कृपालु। वह ईश्वर से अपनी मुक्ति के लिए प्रर्थना करता है। सूरसागर के इस पहले पद में भी यही भाव व्यक्त हुआ है।

चरन कमल बंदौं हरी राई।

जाकी कृपा पंगु गिरि लंघे,

अंधे को सब कछु दरसाई।।

बहिरौ सुने गूंग पुनि बोले रंक चलै सिर छत्र धराई।

सूरदास स्वामी करुनामय बार-बार बंदौं तिहिश पाई।।

(1) प्रणाम करना (2) राजा (3) जिसकी (4) पर्वत (5) गरीब (6) राजा का छत्र (7) उनके (8) पैर।

भ्रमर गीत : सूरसागर का महत्वपूर्ण अंश है- भ्रमरगीत। उद्धव के ज्ञान के अहंकार को तोड़ने के लिए कृष्ण ने उनको ब्रज भेजा था, यह कहकर कि ये ज्ञान द्वारा राध औरउ गोपियों को विरह से मुक्त कराएँ। किंतु गोपियाँ उपदेश सुनने की बजाय उद्धव को मधुकर कहकर उसके ज्ञान के अहंकार का मजाक उड़ती है।

निरगुन कौन देस को बासी

मधुकर कहि समुझाइ सौंहश दै,

बूझति साँच न हाँसी।।

को है जनक, कौन है जननी, कौन नारि, को दासी।

कैसो बरन भेस है कैसो, केहि रस में अभिलासी।।

पावैगों पुनि कियो आपनो जो रे, कहैगो गाँसी।।

सुनत मौन वै रह्यो ठग्यो सो सूर सबै मति नासी।।

1 निर्गुण (निर्गुण-निराकार ईश्वर) 2 निवासी (रहने वाला) 3 भंवरा और उद्धव 4 सौगंध 5 समझना 6 स्त्री (पत्नी) 7 रंग 8 किस 9 गाँस या कपट की बात

भाव पक्ष

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

सूरदास की कविता को भाव पक्ष की दृष्टि से मुख्यत: तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है-

टिप्पणी

(1) दैन्य भाव, (2) लीला गायन, (3) श्रृंगार चित्रण। इन तीनों पर अलग-अलग विचार करके आप सूरदास के भाव-पक्ष की विशेषताओं को अच्छी तरह समझ सकते हैं।

दैन्य भाव : विनय के पदों में सूरदास ने अपनी दीनता और ईश्वर की महत्ता तथा उदारता का वर्णन किया है। चरण कमल बंदी हरि राई में भगवान की महत्ता का पूरा उद्‌घाटन हुआ है। अपने विनय के पदों में सूरदास ने प्रायः 'हौं हरि सब पतितन को नायक', 'प्रभु मैं सब पतितन को टीको', 'अब के नाथ मोहिं लेहु उधरि' आदि जैसे दीनतासूचक भावों के साथ परम भक्त के रूप में अपनी मुक्ति की याचना की है। अपने आरंभिक जीवन में ही सूरदास ने दैन्य भक्ति से परिपूर्ण पदों की रचना की थी। महाप्रभु वल्लभाचार्य की प्रेरणा से वे सख्य भाव के उपासक बन गए। सख्य भाव का अर्थ है. सखा या मित्र भाव। इस भाव से सरदास ने कृष्ण-लीला का विस्तार से गायन किया है, जिसपर हम आगे विचार करेंगे।

लीला गायन : कृष्ण की लीलाओं के गायन में सूरदास ने भागवत पुराण की कथा को ही मुख्य आधर बनाया है। लेकिन इसे भागवत का अनुवाद नहीं कहा जा सकता। इसमें कवि ने अपनी मौलिक प्रतिभा का पर्ण परिचय दिया है। लीला-गायन को भी अध्ययन की सुविध के लिए तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं। इनमें पहला है कृष्ण के बाल सौंदर्य और उनकी शिशु-क्रीड़ाओं का वर्णन, दूसरा है, किशोर कृष्ण का नटखटपन और तीसरा है, ग्वाल-बाल और गोपियों के साथ नोंक-झोंक और छेड़-छाड़ का वर्णन।

कृष्ण के बाल रूप का चित्रण करते हुए सूरदास ने उनके पालने (झूले) से लेकर आंगन में विचरने, घर की देहरी लांघने तक की क्रीड़ाओं का अत्यंत विशद और विस्तृत वर्णन किया है। बाल जीवन की जितनी मनोदशाएँ हो सकती है, उसकी जितनी आकर्षक क्रियाएँ हो सकती हैं सबका अत्यंत सहज-स्वाभाविक चित्र प्रस्तुत करने में सरदास को अदभत सफलता मिली है। इन वर्णनों की मार्मिकता को देखकर बाद के काव्यशास्त्रियों ने वात्सल्य को (बच्चों के प्रति प्रेम भाव को) एक नया रस स्वीकार किया है।

कृष्ण की किशोरावस्था के चित्रण में सूरदास ने उनके गाय चराने, ग्वाल-बालों के साथ खेलने, उनसे झगड़ने, माँ यशोदा से उनकी शिकायत करने से लेकर मक्खन, दही आदि की चोरी का अत्यंत विस्तार से वर्णन किया है। इसी क्रम में राध और ब्रज की गोपियों के साथ उनकी ताक-झोंक और तकरार भी आरंभ हो जाती है, जो आगे चलकर प्रगाढ़ प्रेम में बदल जाती है। इन सबका अत्यंत विस्तृत चित्रण सूरदास ने अत्यंत कौशल के साथ किया है।

अंगार चित्रण : कृष्ण और गोपियों के बीच गहन परिचय आगे चलकर प्रेम में परिवर्तित हो जाता है। वस्तुतः सूरदास का श्रृंगार चित्रण भी एक प्रकार से कृष्ण लीला का ही एक विशिष्ट अंग है। इसमें यमुना-स्नान में चीर हरण, वंशी वादन, दान-लीला, मान लीला. रास लीला आदि के माध्यम से कृष्ण का राध और गोपियों के प्रति प्रेम का चित्रण हुआ है। यह प्रेम लोक-लाज और पारिवारिक मर्यादा की अवहेलना करते हुए स्वच्छंदता का परिचय देता है। इसमें मिलन के अत्यंत स्पष्ट वास्तविक रूपों के बावजूद कहीं माँसलता और अश्लीलता का भाव पाठक में नहीं आने पाता है। अलौकिक प्रेम के रूप में इसको सूरदास ने एक नई मर्यादा प्रदान की है।

श्रृंगार के संयोग पक्ष के चित्रण की भाँति ही उसके वियोग पक्ष के चित्रण में भी सूरदास को पूरी सफलता मिली है। इसके लिए उन्होंने भ्रमरगीर प्रसंग का आयोजन किया है, जो हिंदी साहित्य की एक विशिष्ट उपलब्धि मानी है। वियोग-वर्णन की दृष्टि से 'भ्रमरगीत' की मार्मिकता का उद्‌घाटन करते हुए

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि 'वियोग की जितनी अंतर्दशाएँ हो सकती हैं, जितने ढंगों से उन दशाओं का साहित्य में वर्णन हुआ है और सामान्यत: हो सकता है, वे सब सूरदास के काव्य में मौजूद हैं।' (त्रिवेणी, 59) वियोग की इस गंभीरता का वास्तविक कारण है, एक लम्बा साहचर्यजन्य. प्रेम। एक लम्बे समय की जान-पहचान से उत्पन्न प्रेम जिस प्रकार संयोग काल में हर सीमा को तोड़ देता है, उसी प्रकार वियोग-काल में प्राणान्तक भी सिद्ध होता है। इस दशा को सूरदास ने अत्यंत मार्मिक ढंग से चित्रित किया है।

वियोग-वर्णन के साथ ही सूरदास के 'भ्रमरगीत' का एक दूसरा भी महत्वपूर्ण पक्ष है। इसके माध्यम से सूरदास ने उद्धव को निर्गुण ज्ञानमार्ग का प्रतिनिधि बनाकर निर्गुण का खंडन और सगुण का मण्डन भी कुशलतापूर्वक किया है। गोपियों के पास पहुँच कर जब उद्धव ज्ञान का संदेश देना शुरू करते हैं तभी एक भँवरा वहाँ मंडराता हुआ आता है। गोपियाँ उस भँवरे को संबोधित कर उद्धव पर टीका-टिप्पण ी करती हैं। इस प्रक्रिया में वे ज्ञान को निर्गुण और निश्छल प्रेम उनकी ग्रामीण सहज प्रकृति के साथ मिलकर एक तरफ गंभीरता का परिचय देता है, तो दूसरी तरफ अपने चुटीले व्यंग्य के कारण हास्य और विनोद की सृष्टि भी करता है। उनका सहज-सरल तर्क है कि 'लरिकाई को प्रेम कहौ अति कैसे छूटै' जो उद्धव को निरुत्तर कर उनके ज्ञान-गर्व को चूर कर देता है। इससे स्पष्ट है कि भ्रमरगीत प्रसंग की योजना के माध्यम से सूरदास ने एक ओर गोपियों की विरह-व्यथा का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है तो दूसरी ओर कबीर आदि के निर्गुण ज्ञान मार्ग का खण्डन करते हुए अपने सगुणोपासना के मार्ग का औचित्य भी सिद्ध किया है।

उपर्युक्त विवेचन-विश्लेषण से यह स्पष्ट है कि सूरदास सख्य भाव के उपासक थे, जिसके लिए उन्होंने कृष्ण लीला का गायन किया है। कृष्ण के वात्सल्य और श्रृंगार के चित्रण में भी वे अपने सख्य भाव की उपासना का ही परिचय देते हैं।

सरंचना शिल्प

आपने सूरदास के भाव-वैभव और उनकी सहज भक्ति भावना पर विचार कर लिया है। यहाँ आप उनके संरचना-शिल्प की विशेषताओं का अध्ययन करने जा रहे हैं। इस संबंध में आपको ध्यान में रखना होगा कि सूरदास ब्रजभाषा के पहले कवि हैं, बावजूद इसके उनके

प्रतिपाद्य

सूरदास भक्तिकाल की कृष्णोपासक सगुण काव्य-धरा के प्रतिनिधि भक्त कवि थे। अपनी सख्य भक्ति की भावना की अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने कृष्ण-लीला के गायन को अपने काव्य का प्रमुख प्रतिपाद्य बनाया था। कृष्ण के सगुण-साकार रूप की प्रतिष्ठा के लिए उन्हें ब्रह्म के निर्गुण-निराकार रूप का खण्डन भी करना पड़ा है। अत: ब्रह्म के स्वरूप-ज्ञान की अपेक्षा उन्होंने उससे प्रेम को अधिक महत्व दिया है। यह प्रेम भाव भक्त और भगवान के छोटे-बड़े या ऊँच-नीच की भावना पर आधरित न होकर सख्य भाव अर्थात सखा या मित्र-भाव, बराबरी के भाव पर आधरित है। पूर्ण तल्लीनता के साथ इसे ही सूरदास ने अपने काव्य का प्रतिपाद्य बनाया है। कृष्ण की विभिन्न लीलाओं को अपनी भक्ति भावना का प्रतिपाद्य बनाकर प्रत्यक्ष और परोक्ष-दोनों रूपों में कृष्ण भक्ति को लोकप्रिय बनाना भी सूरदास का उद्देश्य रहा है। फलस्वरूप कृष्ण के लोकरंजक रूप को लोगों के सामने प्रस्तुत कर कवि ने भारतीय जनता के बीच कृष्ण भक्ति का प्रचार-प्रसार भी किया है। कृष्ण से संबंधित दान लीला, मान लीला, रास लीला, चीर हरण, कुंज मिलन आदि सरस प्रसंगों और झाँकियों द्वारा सूरदास ने समस्त उत्तर भारत के साथ ही बंगाल तक कृष्ण के लोकरंजनकारी रूप को व्यापक बनाया है। इसे उनके काव्य का एक गौण प्रतिपाद्य स्वीकार किया जा सकता है।

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

संदर्भ सहित व्याख्या

आपने सूरदास द्वारा रचित उपर्युक्त पदों का वाचन और सूरदास के काव्य की विशेषताओं का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया होगा। सूरदास के साहित्य को किस तरह पढ़ा जाना चाहिए और उसकी व्याख्या कैसी करनी चाहिए, इसके लिए हम उपर्युक्त तीन पदों में से एक पद की व्याख्या यहाँ दे रहे हैं। इसकी सहायता से आप अन्य पदों की व्याख्या भी कर सकते हैं।

पद : निरगुन कौन देस को बासी।

संदर्भ : यह महाकवि सूरदास द्वारा लिखा हुआ पद है। कृष्ण के मथुरा चले जाने के बाद गोपियाँ उनके विरह में व्याकुल रहती हैं। कृष्ण के मित्र उद्धव गोपियों को समझाने वृंदावन आते हैं और उन्हें निर्गुण-निराकार ईश्वर में विश्वास करने का उपदेश देते हैं। गोपियाँ उद्धव के मत का विरोध करती हैं और अपना पक्ष प्रस्तुत करती हैं। इसके लिए वे उद्धव को मधुकर (भ्रमर) कहकर संबोधित करती हैं।

व्याख्या : गोपियाँ उद्धव को संबोधित करते हुए कहते हैं, हे मधुकर अर्थात् उद्धव, तुम हमें समझाकर कहो कि निर्गुण किस देश का रहने वाला है। हम सौगंध देकर तुमसे सच-सच पूछ रही हैं, कोई हँसी नहीं कर रही हैं। हमें यह बताओ कि उस निर्गुण के माता-पिता कौन हैं, निर्गुण की पत्नी कौन हैं और उनकी दासी कौन हैं? उनका रंग कैसा है अर्थात् काले हैं या गोरे? उनकी वेशभूषा कैसी है अर्थात् वे किस तरह के वस्त्र धरण करते हैं और किस तरह के रस (आनंद) के वे इच्छुक हैं। गोपियाँ उद्धव को चेतावनी-सी देती हुई कहती हैं कि अगर तुमने कपटपूर्ण बात की अर्थात् तुम झूठ बोलोगे तो तुम्हें ही अपनी गलत करनी (कर्म) का फल भुगतना पड़ेगा। सूरदास जी कहते हैं कि उद्धव गोपियों की ये बातें सुनकर चुप हो गएऔर ठगे से रह गए, उनकी सारी बुद्धि नष्ट हो गई अर्थात् उनको कोई उत्तर नहीं सूझा।

विशेष :

1. सूरदास का यह पद अत्यंत महत्वपूर्ण है। निर्गुण मत के विरूद्ध गोपियों का पक्ष यहाँ प्रस्तुत किया गया है। लेकिन गोपियों के तर्कों में बौद्धिक चतुराई और दार्शनिक जटिलता नहीं है। इन पंक्तियों से गोपियों की विनोद-वृत्ति, भोलापन, चपलता और सहज बुद्धि का पता चलता है। 2. यह पद ब्रजभाषा में है। इसकी भाषा परिमार्जित, सहज और स्वाभाविक है। संस्कृत के तत्सम शब्दों के साथ देशज शब्दों (गाँसी, बूझति) का भी प्रयोग हुआ है। ठगा-सा रहना मुहावरा है। 'मधुकर' में श्लेष अलंकार है। श्लेष अलंकार वहाँ होता है जहाँ एक ही शब्द दो अर्थो में प्रयुक्त होता है। यहाँ मधुकर का अर्थ भँवरा है। दूसरा अर्थ उद्धव है क्योंकि उद्धव भी काले थे इसलिए गोपियाँ उद्धव को मधुकर कह कर संबोधित करती हैं।

3. इस पद में कबीर आदि के निर्गुण मत का खण्डन और अपने सगुण मत का समर्थन भी अत्यंत कौशल के साथ व्यक्त हुआ है। अभ्यास 1. नीचे व्याख्या के लिए कुछ पंक्तियाँ दी गई हैं। रिक्त स्थानों में अत्यंत संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

(क) बहिरौ सुनि गूंग पुनि बोलै, रंक चलै सिर छत्र धराई।

....

....

(ख) चारु कपोल लोल लोचन, गोरोचन तिलक दिए।

....

टिप्पणी

.....

.....

(ग) धन्य सूर एकौ पल इहिं सुख, का सत कल्प जिए।

.....

.....

.....

2. नीचे दी गई पंक्तियों की शिल्पगत विशेषताएँ बताइए।

(क) चारु कपोल लोल लोचन, गोरोचन तिलक दिए।

लट लटकनि मनु मत्त मधुप गन मादक मधुहिं पिए।।

.....

.....

.....

(ख) सुनत मौन ह्वै रह्यौ ठग्यौ सो सूर सबै मति नासी।

.....

.....

.....

बोध प्रश्न

1. नीचे दिए गए वाक्यांशों को व्यक्त करने वाले सही शब्द बताइए।

   (क) ईश्वर के प्रति प्रेम की अनुभूति (श्रृंगार/भक्ति)

   (ख) ईश्वर को निराकार मानना (निर्गुण मार्ग/सगुण मार्ग)

   (ग) लौकिक प्रेम कथाओं के माध्यम से ईश्वरीय प्रेम की अभिव्यक्ति का काव्य (ज्ञानमार्गी काव्य/प्रेममार्गी काव्य)

2. दैन्य भाव की भक्ति का तात्पर्य क्या है, दो पंक्तियों में बताइए।
3. सूरदास के काव्य का मुख्य प्रतिपाद्य बताइए।
4. सूरदास की काव्यभाषा की दो विशेषताएँ बताइए।
5. सूरदास की शैली संबंधी दो विशेषताओं का उल्लेख दो पंक्तियों में कीजिए।

3.4 तुलसीदास

रामभक्त गोस्वामी तुलसीदास भक्ति काव्य की सगुण काव्यधरा के दूसरे महत्वपूर्ण कवि हैं। उन्होंने मुख्यत: रामचरित को ही अपने काव्य का विषय बनाया था, इसलिए उन्हें रामोपासक कवि कहा जाता है।

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

जीवन परिचय : सूरदास की तरह तुलसीदास के जीवन-वृत्त को लेकर भी विवाद है। तलसीदास का जन्म सन 1532 में हुआ था। जन्म स्थान राजापुर (उत्तर प्रदेश) बताया जाता है। तुलसीदास ने श्रामचरित मानसश की रचना 1575 के आसपास की थी। उनके पिता का नाम आत्माराम और माता का नाम हलसी बताया जाता है। उनकी पत्नी का नाम रत्नावली था। सन् 1623 में उनका देहावसान हो गया था।

रचनाएँ : तुलसीदास को ख्याति दिलाने वाली प्रमुख रचना 'रामचरित मानस' है। राम की कथा पर आधरित यह महाकाव्य उन्होंने अवधी भाषा में रचा था। इसके अतिरिक्त भी उन्होंने कई काव्य-ग्रंथों की रचना की। तुलसीदास ने उस समय की दोनों प्रमुख साहित्यिक भाषाओं- अवधी और ब्रज में काव्य रचना की थी।उन्होंने उस समय प्रचलित प्राय: सभी शैलियों में काव्य लिखा। उनके द्वारा रचे गए ग्रंथ हैं- रामचरित मानस, विनय पत्रिका, कवितावली, गीतावली, कृष्ण गीतावली. जानकी मंगल, पार्वती मंगल, रामलला नहछू, बरवै रामायण, दोहावली, वैराग्य संदीपनी, हनुमान बाहुक एवं रामाज्ञान प्रश्न।

पृष्ठभूमि : तुलसीदास सगुणमार्गी थे। उन्होंने राम के जीवन चरित को काव्य का आधर बनाया और उनकी लोक-लीलाओं का गायन किया। उनकी भक्ति सेवक-सेव्य भाव पर आधरित थी। उन्होंने अपने को राम का सेवक समझा और राम को अपना स्वामी। तुलसीदास ने अपने काव्य द्वारा लोकमंगल की भावना को अभिव्यक्ति प्रदान की। उनका विश्वास था कि जब-जब धर्म का ह्रास होता है और पाप बढ़ता है, सज्जन कष्ट उठाते हैं और दुष्टों का अनाचार बढ़ता है, तब-तब भगवान मनुष्य रूप धरण करते हैं और अपनी लीला द्वारा धर्म की रक्षा और पाप का अंत करते हैं। इसी भावना से प्रेरित होकर राम कथा पर आधरित काव्य ग्रंथों की रचना की और अपनी मुक्ति के साथ ही लोकमंगल की कामना करते हुए विनय पत्रिका लिखी।

काव्य-वाचन

रामचरित मानस : गोस्वामी तुलसीदास की ख्याति का आधर है, रामचरित मानस। इस महाकाव्य में राम की कथा प्रस्तुत की गई है। राम-जन्म से लेकर राम के राज्य-तिलक तक की कथा को सात कांडों (खंडों) में विभाजित किया गया है। रामचरित मानस की रचना दोहा-चौपाई छंद में हुई है, जिसकी भाषा अवधी है। इसका पहला कांड, बालकांड. है। तुलसीदास ने इसके आरंभ में विभिन्न देवी-देवताओं की स्तुति की है। इसके बाद उन्होंने काव्य संबंधी अपने दृष्टिकोण को प्रस्तुत किया है, जिसका एक अंश नीचे दिया जा रहा है

मनि मानिक मुकुता छबि जैसी। अहिश गिरि गज सिर सोह न तैसी॥
नृप किरीट- तरुनी तनु पाई। लहहिं सकल सोभा अधिकाई॥
तैसेहि सुकवि कवित बुध कहहीं। उपजहिं अनत अनत छवि लहहीं॥
भगति हेतु बिधि भवन बिहाई। सुमिरत सरदश आवति धई॥
रामचरित सर बिनु अन्हवायें। सो श्रम जाइ न कोटि उपायें॥
कवि कोबिद अस हृदयँ बिचारी। गावहिं हरिजस कलिमलहारी ॥
कीन्हें प्राकृत जनश गुन गाना। सिर धुनि गिरा लागि पछिताना॥
हृदय सिंधु मति सीप समाना। स्वाति सारदा कहहिं सुजाना॥
जो बरषै बर बारिश बिचारू। होहिं कबित मुकुतामनि चारू॥
जुगुति बेधि पुनि पोहिअहिश राम चरित बर ताग।
पहिरहिं सज्जन बिमल उर सोभा अति अनुराग॥

(1) साँप (2) मुकुट (3) ब्रह्मा (4) सरस्वती (5) पंडित (6) कलियुग रूपी मौत को हरने वाले (7) राजा-महाराजा (8) सरस्वती (9) पानी (10) पिरोया जाना (11) धगा।

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

विनय पत्रिका : गोस्वामी तुलसीदास की भक्ति दास्य भाव की थी। 'विनय पत्रिका' में तुलसीदास ने अपने दैन्य भाव को व्यक्त किया है। ईश्वर दयालु है, वह पापियों का उद्धार करने वाला है। मुझ-सा कोई पापी नहीं है, इसलिए हे प्रभु तू मेरा उद्धार कर। यहीं भाव विनय पत्रिका में व्यक्त हुआ है। यहाँ विनय पत्रिका का एक पद वाचन के लिए दिया गया है:

कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।
श्री रघुनाथ-कृपाल-कृपा तें संत-सुभाव गहौंगे।।1।।
जथालाभ संतोष सदा काहू सों कुछ न चहौंगो
प्ररहित-निरत निरंतर मन क्रम बचन नेम निबहौंगो।।2।।
परुषश बचन आदि दुसह स्रवन सुनि तेहि पावक न दहौंगो
विगतमान सम सीतल मन, परगुन, नहिं दोष कहौंगो।।3।।
परिहरि देह जनित चिंता, दुख-सुख समबुद्धि सहौंगो
तुलसिदास प्रभु यहि पथ रहि, अविचल हरि भक्ति लहौंगो।।4।।

(1) कठोर (2) मान का त्याग (3) छोड कर

गीतावली : 'गीतावली' की रचना तुलसीदास ने ब्रजभाषा में की है। यह सूरसागर की तरह गीति-काव्य है। इसमें तुलसीदास ने राम चरित से संबंधित विभिन्न मार्मिक प्रसंगों पर गीतों की रचना की है। राम कथा का एक महत्वपूर्ण प्रसंग है - युद्ध के दौरान मेघनाद के बाण से लक्ष्मण का घायल होना और लक्ष्मण के मूर्छित होने पर राम का विलाप करना। इस प्रसंग से संबंधित 'गीतावली' का एक पद वाचन के लिए दिया जा रहा है:

मेरो सब पुरुषारथ थाको।
बिपति बँटावन बंधु-बाहु बिनु करौं भरोसो काको ।।1।।
सुनु सुग्रीव साँचेहु मोपर फेरयो बदल बिधता
गिरि, कानन जैहें साखामृग4 हौं पुनि अनुज-संघाती
वैहै, कहा विभीषन की गति रही सोच भरि छाती।।3।।
तुलसी सुनि प्रभु बचन भालु-कपि सकल बिकल हिय हारे
जामवंत हनुमंत बोलि तब, औसर जानि प्रचारे।।4।।

(1) थक गया (2) किसका (3) सचमुच (4) वानर (5) छोटे भाई का हत्यारा

भाव पक्ष

गोस्वामी तुलसीदास सिर्फ कवि नहीं थे। वे काव्य की रचना का उद्देश्य मनोरंजन को नहीं समझते थे। उनके विचार में वही कविता श्रेष्ठ होती है जिसमें राम के निर्मल चरित्र का गुणगान किया गया हो। उनकी दृष्टि से राम परब्रह्म थे जिन्होंने धर्म की रक्षा और असुरों का नाश करने के लिए नर रूप में अवतार लिया था।

राम-कथा का प्रणयन : तुलसीदास ने रामकथा का प्रणयन इसी भावना से किया है। उन्होंने राम के चरित्र को काव्य-ग्रंथों में प्रस्तुत किया है। रामचरित मानस महाकाव्य है, जिसमें राम के जन्म से राम-राज्य की कथा कही गई है। तुलसी के राम, भक्ति के आधर हैं। रामचरित मानस में तलसीदास की लोक-मंगल की भावना भी व्यक्त हुई है। उत्तरकांड में । उन्होंने राम-राज्य की परिकल्पना प्रस्तुत की है, जिसके अनुसार राम-राज्य में किसी को कोई शारीरिक, भौतिक और दैवी कष्ट नहीं था। सभी अपने-अपने धर्म का पालन करते थे और सुख से रहते थे।, तुलसी के काव्योत्कर्ष का पता उन स्थलों

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

पर लगता है, जो अत्यंत मर्मस्पर्शी हैं। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने राम-कथा के निम्नलिखित मर्मस्पर्शी स्थल बताए हैं- राम का अयोध्या त्याग और पथिक के रूप में वनगमन, चित्रकूट में राम और भरत का मिलन, शबरी का आतिथ्य, लक्ष्मण को शक्ति लगने पर राम का विलाप, भरत की प्रतीक्षा। तुलसी ने इन प्रसंगों का अत्यंत भाव-प्रवण चित्रण किया है। विशेषत: 'गीतावली' और 'कवितावली' में ये प्रसंग अत्यंत सहृदयता के साथ प्रस्तुत हुए हैं। तुलसी ने राम-कथा के माध्यम से पारिवारिक और सामाजिक संबंधें का आदर्श रूप भी प्रस्तुत किया है। उनके द्वारा चित्रित भाई-भाई, पिता-पुत्र, माता-पुत्र, राजा-प्रजा, स्वामी-सेवक आदि विभिन्न संबंधें के परिप्रेक्ष्य में मानवीय भावना और कर्तव्यों की उत्कृष्टता देखी जा सकती है। इस दृष्टि से तुलसी के राम स्नेह, शील, नीति और त्याग के मूर्तिमान रूप हैं। 'रामचरि मानस' में तुलसीदास ने अपनी लोकमंगल की भावना को अत्यंत प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया है।

विनय भावना : भक्ति का एक प्रमुख तत्व है - ईश्वर की सामर्थ्य शक्ति का अनुभव भक्त यह मानता है कि ईश्वर सर्वशक्मिान है, सामर्थ्यवान-दयालु है, करुणा का सागर है। दूसरी ओर, भक्त अपनी दीनता और लघुता का बोध भी करता है। वह इसी दैन्य भाव से प्रेरित होकर ईश्वर से अपनी मुक्ति की प्रार्थना करता है। तुलसी की 'विनय पत्रिका' में भक्ति की इन्हीं भावनाओं की तीव्र अभिव्यक्ति हुई है। तुलसीदास ने 'विनय पत्रिका' में राम के शील, सौंदर्य और शक्ति का भी चित्रण किया है। उन्होंने अत्यंत करुण स्वर में अपनी लघुता और दीनता को भी व्यक्त किया है तथा राम से प्रार्थना की है कि मुझे इस पाप सागर से उबार ले।

तू दयालु, दीन हैं, तू दानि, हौं भिखारी
हौं प्रसिद्ध पातकी, तू पापपुंजहारी ब्रह्म तू,
हौं जीवन, तू ठाकुर, हौं चेरो
तात मात सखा गुरु तू, सब विधि हितु मेरो

'विनय पत्रिका' की रचना तुलसीदास ने एक प्रार्थना-पत्र या अर्जी के रूप में की है। इसमें अपने दुखों के साथ ही उन्होंने समाज में व्याप्त दुखों को दूर करने के लिए भगवान से निवेदन किया है। इसीलिए इसमें तुलसीदास की भक्ति के साथ ही उनकी लोक-मंगल की कामना भी व्यक्त हुई है।

संरचना शिल्प

भक्त कवियों में तुलसीदास जैसी काव्य-प्रतिभा शायद किसी में नहीं थी। उन्होंने उस समय प्रचलित काव्य भाषाओं, छंदों और काव्य-रूपों का सफलतापूर्वक प्रयोग किया था। भाषा और शैली, दोनों दृष्टियों से उनका काव्य अत्यंत उत्कृष्ट कोटि का है।

काव्य-रूप और शैली : गोस्वामी तुलसीदास ने उस समय प्रचलित प्राय: सभी काव्य-रूपों का प्रयोग किया है। 'रामचरित मानस' की रचना उन्होंने दोहा-चौपाई छंद में की है, जिसमें जायसी ने 'पद्मावत' की रचना की थी। कबीर के दोहे और पद शैली में 'दोहावली' और 'विनय पत्रिकाश. सरदास और विद्यापति की लीला-गान विषयक गीति शैली में 'गीतावली' और 'कष्ण गीतावली' गंग आदि भाट कवियों की 'सवैया', 'कवित्त' शैली में, 'कवितावली', रहीम की बरवै शैली में 'बरवै रामायण' की रचना कर तुलसीदास ने अपनी काव्य-रूप संबंधी निपुणता का परिचय दिया है। तुलसीदास ने शादी-विवाह आदि मंगल-अवसरों पर गाए जाने वाले लोकगीतों की शैली में 'जानकी मंगल', 'पार्वती मंगल', और 'रामलला नहछू' की रचना भी की। उन्होंने उन दिनों जनता में प्रचलित सोहर, नहछू गीत, चांचर, बेली, बसंत आदि रागों का भी सफलतापूर्वक प्रयोग किया है।

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

काव्य भाषा : तुलसीदास के युग में ब्रज और अवधी, दोनों का काव्य-रचना के लिए प्रयोग होता था। जायसी ने 'पदमावत' की रचना अवधी में की थी और सूरदास ने 'सूरसागर' ब्रजभाषा में लिखा था। तुलसी ने अवधी और ब्रज, दोनों भाषाओं का उपयोग किया। 'रामचरित मानस' की रचना उन्होंने अवधी में की थी। 'गीतावली' और कृष्ण गीतावली' की रचना उन्होंने ब्रजभाषा में की। 'कवितावली', 'दोहावली', 'जानकी मंगल', 'बरवै रामायण', 'रामलला नहछू' में ठेठ अवधी की मिठास है। 'विनय पत्रिका' की भाषा यद्यपि ब्रज है, लेकिन उस पर अवधी का भी असर है। तुलसी की भाषा की विशेषता यह है कि वह विषयानुकू रूप धरण कर लेती है। 'रामचरित मानस' की भाषा, प्रसंगों और चरित्रों के अनुसार परिवर्तित होती है। जहाँ आवश्यक होता है वहाँ वे तत्सम या तद्भव या लोकोक्ति, मुहावरों आदि का प्रयोग करते हैं। तुलसीदास की भाषागत विशेषताओं को रखांकित करने वाली एक मान्यता है तुलसी गंग दुवौ भये सुकबिन के सरदार। जिनकी रचना में मिलै भाषा विविध प्रकार।।

अलंकार-विधन : तुलसीदास ने अपनी रचनाओं में अलंकारों का अत्यंत सध हुआ प्रयोग किया है। उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक आदि साम्यमूलक अलंकारों के प्रयोग में उन्हें पर्याप्त सफलता मिली है। उन्हें रूपक-सम्राट के सम्मान से सम्मानित किया जाता है। सांगरूपकों के अत्यधिक लम्बे प्रयोग में पूरे हिन्दी काव्य-जगत में तुलसीदास अद्वितीय है। 'रामचरित मानस' में कविता-सरिता, आश्रम-सागर, भक्ति चिंतामणि-ज्ञानदीपक जैसे लम्बे सांग रूपकों की सटीक और कुशल योजना समूचे भारतीय काव्य में अप्राप्य है।

प्रतिपाद्य

'रामचरित मानस' में अपने प्रतिपाद्य का उल्लेख करते हुए गोस्वामी तुलसीदास ने लिखा हैं।

यहि मँह आदि मध्य अवसाना।
प्रभु प्रतिपाद्य राम भगवाना।।

अर्थात् तुलसीदास का उद्देश्य अपने प्रभु राम की भगवत्ता या उनके ब्रह्मत्व को प्रतिपादित करना था। अपनी समस्त रचनाओं में उन्होंने इस कार्य को अत्यंत सफलतापूर्वक संपादित किया है। लेकिन इस प्रतिपाद्य के पीछे उनकी लोकमंगल की प्रकबल आकांक्षा निहित थी। श्रामचरितश के माध्यम से उन्होंने समाज और धर्म के क्षेत्र में फैली विषमताओं के बीच समन्वय करने का प्रयास किया। उनकी समन्वय की विराट योजना के कारण आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उन्हें लोकनायक के पद से अलंकृत किया। अत: तुलसीदास द्वारा राम की भगवत्ता का प्रतिपादन राम-भक्ति के प्रचार-प्रसार के साथ ही लोकमंगल की भावना से प्रेरित । है। इस महान लक्ष्य को ही उन्होंने अपना काव्यादर्श निर्धरित किया था

कीरति भनिति भूति भल सोई। सुरसरि सम सब कहुँ हित होई।

अर्थात् यश (कीरति), कविता (भनिति), ऐश्वर्य (भूति) तभी अच्छा होता है जब वह गंगा (सुरसरि) के समान सबके लिए हितकारी हो। तुलसीदास का यह आदर्श भी उनके प्रतिपाद्य से ही जुड़ा हुआ है।

संदर्भ सहित व्याख्या

आपने तुलसीदास द्वारा रचित काव्य का वाचन और उनके काव्य की विशेषताओं का ध्यानपूर्वक अध्ययन किया होगा। तुलसीदास के काव्य की व्याख्या कैसी करनी चाहिए इसके लिए हम विनय पत्रिकाश के पद की व्याख्या प्रस्तुत कर रहे हैं। आप अन्य अंशों की व्याख्या स्वयं करने का प्रयाग कीजिए।

पद : कबहुँक हौं यहि रहनि रहौंगो।

टिप्पणी

संदर्भ : यह गोस्वामी तुलसीदास द्वारा लिखा हुआ पद है जो 'विनय पत्रिका' से उद्धत किया गया है। इस पद में तलसीदास ने इस प्रकार का जीवन जीने की कामना की है. जब वे श्री राम की कृपा से पूरी तरह संत का स्वभाव प्राप्त करेंगे।

व्याख्या : तुलसीदास कहते हैं कि क्या मैं ऐसा जीवन-यापन कर सकूँगा, क्या मैं कृपालु श्री रघुनाथजी की कृपा से संतों जैसा स्वभाव प्राप्त कर सकूँगा। क्या मुझे जो भी प्राप्त होगा, उसी से हमेशा संतुष्ट रहूँगा। किसी से भी किसी तरह की इच्छा नहीं रखूगा। क्या मैं सदा दूसरों का हित करता रहूँगा? क्या मैं मन, वचन और कर्म से नियमों का पालन करूँगा। क्या मेरा ऐसा स्वभाव बन सकेगा कि मैं दूसरों के कठोर वचन सुनकर उसकी आग में नहीं जलूँगा। अपमान से परे रहकर एक-सा और शीतल रख सकूँगा। हमेशा दूसरे के गुण ही देखूगा और दो नहीं कहूँगा। शारीरिक चिंताएँ छोड़कर सुख और दुख, दोनों को समान बुद्धि से सहूँगा और उनमें कोई भेद नहीं मानूँगा। तुलसीदास कहते हैं कि हे प्रभु! क्या मैं इस इस मार्ग पर चलकर हरि की भक्ति मतें अडिग रह सकूँगा?

विशेष :

1. इस पद में तुलसीदास ने ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण और संतों जैसा जीवन जीने की ;इच्छा व्यक्त की है।
2. 'पर हित निरत निरंतर' में लोक-मंगल की भावना व्यक्त हुई है।
3. भावों की अभिव्यक्ति अत्यंत सहज एवं सरल है।

उपर्युक्त आधर पर आप स्वयं तुलसीदास के अन्य काव्यांशों को समझने और उनकी व्याख्या करने का प्रयास कीजिए।

बोध प्रश्न

आपने तुलसीदास के काव्य का अध्ययन किया है। अब आप निम्नलिखित प्रश्नों का उत्तर दीजिए:

1. 'मुझ सा कोई पापी नहीं, इसलिए हे प्रभु तु मेरा उद्धार कर।' इस कर्थ के संदर्भ में तुलसीदास के काव्य की सबसे प्रमुख विशेषता बताइए।

   (क) लोकरंजन (ख) लोकमंगल

   (ग) विनय भावना (घ) भक्ति भावना

2. 'रामरचित मानस' की रचना मुख्यत: निम्नलिखित छंदों में हुई।

   (क) दोहा-चौपाई (ख) कवित्त-सवैये

   (ग) वार्णिक छंद (घ) मुक्त छंद

3. तुलसीदास किस भाव के उपासक थे?

   (क) दाम्पत्य भाव (ख) सख्य भाव

   (ग) निर्गुण भाव (घ) सेवक-सेव्य भाव

3.5 मैथिलीशरण गुप्त

आधुनिक हिंदी काव्य : आधुनिक हिंदी काव्य की शुरूआत 19वीं सदी के अंतिम दशकों में हुई। आधुनिक काल से पहले हिंदी में कविता ब्रज, अवधी, राजस्थानी आदि बोलियों में होती थी, किंतु गद्य

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

की तरह पद्य की भाषा भी आधुनिक युग में खड़ी बोली हो गई थी। भारतेंदु हरिश्चंद्र (1850-1885) के समय तक काव्य की भाषा प्राय: ब्रज ही बनी रही, किंतु उसके बाद धीरे-धीरे ब्रज का स्थान खड़ी बोली ने ले लिया। बीसवीं सदी की शुरुआत के आसपास हिंदी काव्य की जिस प्रवृत्ति का उदय हुआ, वह मध्ययुगीन हिंदी कविता से भाषा और शिल्प की दृष्टि से ही नहीं भाव और विचार की दृष्टि से भी काफी भिन्न थी। इस दौर की कविता में राष्ट्रीय भावना और समाज सुधर के स्वर प्रमुख थे। इन्हीं से प्रेरित होकर इस दौर के कवियों ने काव्य रचना की थी। इनमें मैथिलीशरण गुप्त प्रमुख थे।

जीवन परिचय एवं रचनाएँ : मैथिलीशरण गुप्त का जन्म 3 अगस्त, 1886 को चिरगांव, झांसी में हुआ था। आरंभ से ही उनमें राष्ट्रीयता की भावना प्रबल थी। इसी से प्रेरित होकर उन्होंने 1912 में श्भारत भारतीश नामक काव्य की रचना की जो उस समय अत्यंत लोकप्रिय हुई। मैथिलीशरण गुप्त मानवतावादी कवि थे और इस दृष्टि से उन्होंने महान भारतीय चरित्रों को लेकर महाकाव्यों की रचना की जिनमें मुक्तक काव्य लिखे जिनमें 'जयद्रथ वध', 'पंचवटी', 'द्वापर', 'जयभारत' आदि प्रमुख हैं। मैथिलीशरण गुप्त को राष्ट्र-कवि के रूप में प्रसिद्धि प्राप्त हुई और वे राज्यसभा के सदस्य भी मनोनीत किए गए थे। सन 1964 में चिरगांव में ही उनका देहाबसान हुआ।

काव्य-वाचन

श्री मैथिलीशरण गुप्त का महाकाव्य 'साकेत' उनकी प्रसिद्ध रचना है। गुप्तजी ने 'साकेत' में राम-कथा को नवीन दृष्टि से प्रस्तुत किया है। साकेत के नवें सर्ग में उन्होंने लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला की विरह-जन्य पीड़ा को गीतात्मक अभिव्यक्ति दी है। इस सर्ग की रचना उन्होंने महावीर प्रसाद द्विवेदी के एक लेख श्कवियों की उर्मिला विषयक उदासीनता से प्रेरित होकर की है। हम यहाँ वाचन के लिए इस सर्ग के कुछ अंश नीचे दे रहे हैं।

सखि, पतंग भी जलता है हा! दीपक भी जलता है।
सीस हिलाकर दीपक कहता
"बंधु! वृथा ही तु क्यों दहता?"
पर पतंग पड़कर ही रहता!
कितनी विह्वलता है।
दोनों ओर प्रेम पलता है।
बचकर हाय! पतंग मरे क्या?
प्रणय छोड़कर प्राण धरे क्या?
जले नहीं तो मरा करे क्या?
क्या यह असफलता है?
दोनों और प्रेम पलता है।
कहता है पतंग मन मारेतुम महान,
मैं लघु, पर प्यारे,
क्या न मरण भी हाथ हमारे?
शरण किसे छलता है?

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

दोनों ओर प्रेम पलता है।
दीपक के जलने में आली'
फिर भी है जीवन की लाली
किंतु पतंग-भाग्य-लिपि काली
किसका वश चलता है?
दोनों ओर प्रेम पलता है। जगती,
वाणिग्वृत्ति है रखती,
उसे चाहती जिससे चखती,
काम नहीं, परिणाम निरखती
मुझे यही खलता है।

नवम सर्ग का एक और अंश, जिसमें उर्मिला की विरह वेदना व्यक्त हुई है देखिए-

सखि, नीलनभस्सर' में उतरा
यह हंस' अहा! तिरता तिरता,
अब तारक-मौक्तिक' शेष नहीं,
निकला जिनको चरता-चरता
अपने हिम-बिंदु' बचे तब भी,
चलता उनको धरता धरता,
गड़ जायँ न कंटक भूतल के,
कर डाल रहा डरता डरता।

(1) सखी (2) व्यापार (3) नीला आकाश रूपी सरोवर (4) सूर्य के प्रतीक के रूप में (5) तारे रूपी मोती (6) ओस की बूंदे (7) हाथ (किरण)

भाव पक्ष

श्री मैथिलीशरण गुप्त ने जब काव्य रचना आरंभ की, तब भारत पराधीन था। गुप्तजी की पहली काव्य-पुस्तक 'रंग में भंग' 1909 में प्रकाशित हुई थी। उस समय स्वतंत्रता-संघर्ष में जनता की व्यापक भागीदारी बढ़ रही थी। मैथिलीशरण गुप्त पर भी इस संघर्ष का प्रभाव पड़ा। उन्होंने 1912 में राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर 'भारत भारती' जैसी अमर रचना दी। यह कृति सिर्फ राष्ट्रीय भावनाओं से प्रेरित होकर ही नहीं लिखी गई थी। बल्कि इसके माध्यम से वे जनता में अपने देश, उसकी संस्कृति और महान परंपरा के प्रति गौरव की भावना जगाना चाहते थे। उनमें वर्तमान की दुर्दशा का भी बोध था, इसलिए उन्होंने 'भारत भारती' में जहाँ अतीत का गौरव-गान किया, वहीं वर्तमान दुर्दशा का चित्र खींचते हुए उससे मुक्त होने का आह्वान भी किया गया था। मैथिलीशरण गुप्त यद्यपि धर्मपरायण व्यक्ति थे, लेकिन उनका दृष्टिकोण मानवतावादी था। उन्होंने प्रबंध काव्यों की रचना के लिए भारतीय इतिहास और पुराणों से कथाएँ और चरित्र लिए. लेकिन उन्हें वर्तमान के मानवीय धरातल पर ही प्रस्तत किया। मानवीय दृष्टिकोण के कारण ही उन्होंने उर्मिला (लक्ष्मण की पत्नी)और यशोधरा (बुद्ध की पत्नी) की व्यथा को वाणी दी। नारी के प्रति उनमें विशेष सहानुभूति की भावना थी।

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

गुप्तजी आदर्शवादी थे। उनका आदर्शवाद सामाजिक और पारिवारिक संबंधें में समानता और त्याग की भावना पर टिका हुआ था। उन्होंने धर्मिक असहिष्णुता और साम्प्रदायिकता का सदैव विरोध किया। आस्थावादी होकर भी उनकी दृष्टि इस लोक पर ही टिकी रही। वे अतीत की महान उपलब्धियों के प्रशंसक थे, साथ ही भारतीय समाज में व्याप्त बुराइयों के आलोचक भी थे। अपने काव्य की इन विशेषताओं के कारण ही वे राष्ट्र-कवि के रूप में मान्य हुए।

'साकेत' उनकी प्रख्यात रचना थी। यद्यपि 'साकेत' का आधर भी राम-कथा है लेकिन उन्होंने राम-कथा के केवल उन्हीं प्रसंगों को लिया है, जिनमें मानवीय संबंधें का उज्जवल पक्ष उजागर हो। उन्होंने राम के मानवत्व को 'साकेत' में प्रतिष्ठित किया है। राम-रावण के संघर्ष की कथा की बजाय 'साकेत' में राम कथा का पारिवारिक रूप अधिक उभरा है और यहाँ पर उनकी दृष्टि ऐसी पारिवारिक मर्यादा के पक्ष में रही है जहाँ नारी के सम्मान की पूरी रक्षा हो और उसे किसी भी तरह से लांछित या अधिकार-विहीन न बनाया जाए। उर्मिला के त्याग को इसीलिए वे सीता से बड़ा. मानते हैं क्योंकि वह परिवार के लिए अपने वैयक्तिक सुखों (पति के साथ, रहने का सुख) का परित्याग कर देती है। 'साकेत' में गुप्तजी ने लोकोन्मुख जीवन के चित्र प्रस्तुत किए हैं।

संरचना शिल्प

श्री मैथिलीशरण गुप्त ने खड़ी बोली को उस समय काव्य-भाषा के रूप में प्रयुक्त किया. जब हिंदी कविता में ब्रजभाषा का ही जोर था। गुप्तजी का प्रमुख योगदान यह था कि उन्होंने गद्य की भाषा को काव्य की भाषा बनाने का सफल प्रयास किया। हिंदी की सहजता औश्र स्वाभाविक उनकी काव्य-भाषा की प्रमुख विशेषता है, यद्यपि कहीं-कहीं उनमें गद्यात्मकता की झलक दिखाई दे जाती है। उन्होंने बोलचाल की भाषा का ही प्रयोग किया है, किंतु तत्सम शब्दों का प्रयोग भी पर्याप्त है। उनका मुख्य झुकाव वस्तु के मूर्त चित्रण की ओर रहा है। द्विवेदी-युगीन व्यावहारिक भाषा के दबाव के कारण उनकी भाषा में वह कलात्मक सौंदर्य नहीं दिखाई देता जो बाद में छायावादी काव्य की विशेषता बनी।

गुप्तजी की प्रवृत्ति प्रबंध काव्य की ओर रही है। 'साकेत' और 'यशोधरा' महाकाव्यात्मक प्रबंध काव्य है। लेकिन महाकाव्यों में जो उदात्तता, संघर्ष और वीरोचित नायकत्व होता है, वह उनके महाकाव्यों में नहीं है। प्रबंध काव्य में भी उनकी प्रवृत्ति गीतात्मकता की ओर रही है। उनकी रूचि जीवन के सहज और भाव-प्रवण प्रसंगों की ओर ज्यादा रही है। ऐसे प्रसंगों में जीवन-संघर्ष का गहन गांभीर्य कम होता है, जो महाकाव्यात्मकता के प्रतिकूल है। गुप्तजी ने काव्य में उन्हीं छंदो का प्रयोग किया जो खड़ी बोली हिंदी की प्रकृति के अनुकूल थे। उनके काव्य में रीतिवादी कवियों की तरह अलंकारों के प्रति विशेष आग्रह नहीं है, न ही उन्होंने काव्य में चमत्कार पैदा करने की कोशिश की है। इस दृष्टि से भी उनके काव्य में सहजता दिखाई देती है।

प्रतिपाद्य

मैथिलीशरण गुप्त राष्ट्रवादी कवि थे। उनमें साहित्य रचना के पीछे राष्ट्रीय उत्थान की भावना प्रेरक रूप में मौजूद रही है। उन्होंने मध्ययुगीन काव्य-चेतना से मुक्त होते हुए कविता के केंद्र में धर्म की बजाय मानव को स्थापित किया। इसी मानव की सांस्कृतिक चेतना को काव्य में उतारना चाहते थे। इस दृष्टि से भारतीय संस्कृति उनके लिए आधर-भूमि का काम करती रही है। भारतीय इतिहास और पुराण कथाओं के विभिन्न चरित्रों के माध्यम से मानवीय संबंधें और मूल्यों को उन्होंने अपनी कविताओं में प्रस्तुत किया। यही कारण है कि उन्होंने 'राम' जैसे चरित्र को भी मानवीय धरातल पर उतारकर सहज मानव-संबंधें के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत किया। उन्होंने अतीत को अपने काव्य का आधर बनाया, लेकिन

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

अपनी दृष्टि को अतीतोन्मुखी नहीं बनने दिया। उन्हें भारत के उज्जवल भविष्य पर गहरा विश्वास था। यह विश्वास उनकी कविताओं में बार-बार व्यक्त हुआ है। अत: नवजागरण के संदर्भ में राष्ट्रीय चेतना का उत्थान उनकी कविता का प्रमुख प्रतिपाद्य माना जा सकता है।

संदर्भ सहित व्याख्या

मैथिलीशरण गुप्त के महाकाव्य 'साकेत' के जो अंश वाचन के लिए दिए गए है, वे अत्यंत सरल और सहज ही समझ में आ जाने वाले हैं। आप स्वयं इन अंशों की व्याख्या करने का प्रयास कीजिए। इन अंशों की व्याख्या करने से पूर्व आप संभव हो तो 'साकेत' को पूरा पढ़ जाइए, जिससे आपको इन अंशों का सही संदर्भ मालूम हो जाएगा। फिर भी आपको यह ध्यान रखना चाहिए कि इन काव्यांशों में लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला अपनी विरह-वेदना व्यक्त कर रही हैं। उर्मिला की यह विरह वेदना सामान्य नारी की वेदना बनकर व्यक्त हुई है। ये काव्यांश गीतात्मक हैं और गीतों में रहने वाली भाव-प्रवणता इनमें भी मौजूद है। नारी की विरह भावना को व्यक्त करने के लिए उन्होंने प्राय: परंपरागत शैली का ही प्रयोग किया है किंतु उसे भी नया रूप और नया अर्थ देने का प्रयास भी दिखाई देता है। उदाहरण के लिए, दीपक और पतंग के प्रतीक बहुत पुराने हैं लेकिन यहाँ उर्मिला की विरह को वे एक नया अर्थ देते हैं। उर्मिला अपनी स्थिति को उस पतंग के रूप में देखती है, जिसका जलना अर्थहीन-सा लगता है।

बोध प्रश्न

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर लिखिए और अपने उत्तर इकाई के अंत में दिए गए उत्तरों से मिलाइए।

1. निम्नलिखित में से किस आधर पर गुप्तजी की रचना मध्ययुगीन काव्य से अलग होती है।
   (क) उन्होंने काव्य में खड़ी बोली को स्वीकार किया।
   (ख) उन्होंने धर्म की बजाय मानव को केंद्र में रखा।
   (ग) उन्होंने काव्य में राष्ट्रीय भावना को प्रस्तुत किया।
   (घ) उपर्युक्त तीनों आधरों पर
2. 'भारत-भारती' में किस भावना को केंद्रीय स्थान प्राप्त हुआ है।
   (क) धर्म भावना
   (ख) मानवीय भावना
   (ग) राष्ट्रीय भावना
   (घ) भक्ति भावना

3.6 सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'

छायावाद : आधुनिक हिंदी काव्य-धरा का उत्कर्ष हमें छायावादी काव्य में नजर आता है। हिंदी में छायावादी काव्य का दौर 1917-18 से 1935-36 तक माना जाता है। छायावादी काव्य भी राष्ट्रीय मुक्ति आंदोलन से प्रेरित था। इस प्रवृत्ति के मूल में स्वतंत्रता की भावना अंतर्निहित थी। न केवल राष्ट्र की स्वतंत्रता, बल्कि रूढ़ियों और गलत मान्यताओं से व्यक्ति की स्वतंत्रता भी इसमें निहित थी। इसलिए छायावादी काव्य में राष्ट्रीय मुक्ति और वैयक्तिक स्वतंत्रता दोनों का स्वर प्रमुख रहा है। छायावादी कवियों की उन्मुक्त चेतना प्रकृति से अत्यंत प्रभावित थी, क्योंकि प्रकृति की उन्मुक्तता में उन्हें अपने हृदय की उन्मुक्तता नजर ने खड़ी बोली हिंदी को पूरी तरह से काव्य-भाषा के अनुकूल बना लिया। अब वह

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

सिर्फ वस्तु का वर्णन करने वाली भाषा नहीं रह गई थी, वरन् उसमें कल्पना की ऊँची उड़ान, मानसिक अंतर्द्वंद और गहन अनुभूति-जन्य जटिल बिंबो को प्रस्तुत किया जा सकता था। छायावादी कवियों ने खड़ी बोली हिंदी का सृजनात्मक संस्कार कर उसे छंद की रूढिबद्धता से मुक्त किया। जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला', सुमित्रानंदन पंत और महादेवी वर्मा छायावाद के प्रमुख कवि हैं। हम यहाँ निराला की एक प्रसिद्ध रचना 'तोड़ती पत्थर' दे रहे हैं।

जीवन परिचय : श्री सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' का जन्म बंगाल के महिषादल राज्य में बसंत पंचमी के दिन सन 1896 में हुआ था। लेकिन उनके माता-पिता उत्तर प्रदेश के बैंसवाड़ा क्षेत्र के रहने वाले थे। निराला ने काव्य-रचना 1915-16 के आसपास आरंभ की थी। उनकी पहली प्रसिद्ध काव्य-रचना 'जूही की कली' थी। निराला की कविताओं में आरंभ से ही प्रगतिशीलता का स्वर रहा है। उन्होंने भाव और भाषा दोनों ही दृष्टियों से हिंदी कविता को समृद्ध किया। उनकी प्रसिद्ध रचनाओं में 'राम की शक्ति पूजा' और 'सरोज स्मृति' नामक लंबी कविता, 'तुलसीदास' नामक खंड काव्य, 'बादल-राग', 'तोड़ती पत्थर', 'भिक्षुक', 'जागो फिर एक बार' आदि कविताएँ विशेष उल्लेखनीय हैं। उन्होंने काव्य के अतिरिक्त कहानी, उपन्यास और निबंध भी लिखे हैं। उनके प्रसिद्ध काव्य-संग्रह हैं- 'परिमल', 'अनामिका', 'गीतिका', 'नये पत्ते', 'बेला'। निरालाजी को जीवन-पर्यन्त आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। लेकिन उनका साहित्य-सृजन फिर भी अनवरत जारी रहा। सन् 1961 में उनका देहांत हो गया।

काव्य वाचन

निराला की कविताओं में 'छायावाद' की प्राय: सभी विशेषताएँ उन्नत रूप में व्यक्त हुई हैं। साथ ही उनमें आरंभ से ही प्रगतिशील कविता के तत्व भी मौजूद रहे हैं। प्रगतिशील कविता में मेहनतकश जनता के प्रति गहरी सहानुभूति होती है और समाज में व्याप्त आर्थिक और सामाजिक विषमता पर भी गहरी चोट होती है। निराला की 'तोड़ती पत्थर' कविता इसी दृष्टि का प्रतिनिधित्व करती है। उनकी यह कविता 1935 में प्रकाशित हुई थी। उनके काव्य-संग्रह 'अनामिका' में यह संग्रहीत है।

तोड़ती पत्थर

वह तोड़ती पत्थर।

देखा उसे मैंने इलाहाबाद के पथ पर

वह तोड़ती पत्थर।

कोई न छायादार

पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार,

श्याम तन, भर बँध यौवन,

नत नयन, प्रिय कर्म रत मन।

गुरु हथौड़ा हाथ,

करती बार-बार प्रहार

सामने तरु मालिका अट्टालिका, प्रकार'।

चढ़ रही थी धूप

गर्मियों के दिन

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

दिवा का तमतमाता रूप
उठी झुलसाती हुई लू
रूई ज्यों जलती हुई भू
गर्द चिनगीश छा गयीं,
प्राय: हुई दोपहर
वह तोड़ती पत्थर।
देखते देखा मुझे तो एक बार, उ
स भवन की ओर देखा, छिन्न तार ।
देख कर कोई नहीं,
देखा मुझे उस दृष्टि से,
जो मार खा रोयी नहीं।
सजा सहज सितार
सुनी मैंने वह नहीं जो थी सुनी झंकार'
एक क्षण के बाद वह काँपी सुधर
ढुलक माथे से गिरे सीकर
लीन होते कर्म में फिर ज्यों कहा
"मैं तोड़ती पत्थर"।

चारदीवारी (5) सूर्य (6) धूलि (7) चिन्गारी (8) जिसका तार-तार बिखरा हो (9) ध्वनि (10) सुंदर (11) पसीने की बूंद

भाव पक्ष

निराला का जीवन अत्यंत संघर्षमय था। इसका प्रभाव उनकी काव्य-यात्रा पर भी पड़ा। निराला का काव्य उनके संघर्षमय जीवन का प्रतिबिंब कहा जा सकता है। उनकी जीवन-दृष्टि और काव्य-दृष्टि का निर्माण इसी संघर्ष के दौरान हुआ। उन्होंने जीवन और काव्य दोनों में सामाजिक-आर्थिक शोषण और रूढ़िगत मान्यताओं का दृढ़तापूर्वक विरोध किया। इसी कारण छायावादी कवियों में सबसे मुखर विद्रोही स्वर निराला के काव्य में व्यक्त हुआ है। निराला के काव्य में भाव-बोध की विविधता नजर आती है, जिसमें जीवन का हर रंग मिलता के उसमें उल्लास और अवसाद, शांति और क्रांति दोनों है। उन्होंने नारी सौंदर्य के चित्र खींचे हैं प्रकृति का मनोरम अंकन किया है, जीवन की उदासी और नैराश्य को कविता में बाँध है तो सामाजिक क्रांति का स्वर भी उनमें अत्यंत प्रबलता से प्रस्तुत हुआ है। निराशा और अवसाद के बावजूद उनकी कविता में प्रबल जिजीविषा (जीने की इच्छा) मिलती है।

'तोडती पत्थर' सामाजिक क्रांति का प्रतिनिधित्व करने वाली कविता है। यह निराला की अत्यंत प्रसिद्ध रचना है। इस कविता में जीवन-यथार्थ के दो विरोधी चित्र एक-साथ दिए गए हैं। एक ओर कड़कड़ाती धूप में पत्थर तोड़ती मजदूरिन है तो दूसरी ओर छायादार पेडों से घिरी विशाल अट्टालिकाएँ हैं। लेकिन कवि को महसूस होता है कि वह पत्थर नहीं तोड रही है, वरन् आर्थिक और सामाजिक विषमता की चट्टान को तोड़ रही है।

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

संरचना शिल्प

निराला का कला-बोध भी विविधता लिए हुए है। भाषा के जितने रूप उनके यहाँ मिलते हैं, उतने किसी अन्य कवि के यहाँ नहीं। उनकी आरंभिक कविताओं में संस्कृतनिष्ठ और समास-प्रधन भाषा दिखाई देती है, जिसका सर्वोत्तम उदाहरण उनकी पहली कविता 'जुही की कली' के साथ ही 'राम की शक्ति पूजा'। लेकिन बाद में उनके बोलचाल की भाषा का रंग नजर आने लगता है। बोलचाल की भाषा में भी वे कई तरह के प्रयोग करते हैं। 'तोडती पत्थर' की भाषा यद्यपि बिल्कुल बोलचाल की नहीं है, लेकिन उसमें शब्दों का प्रयोग अत्यंत कुशलता से किया गया है। शब्दों में व्यक्त कठोरता जीवन की कठोरता को प्रतिबिंबित करने नगती है। 'श्याम तन, भर बँध यौवन,' में 'पत्थर तोड़ती मजदूरिन' का अत्यंत कर्मरत और जीवंत व्यक्तित्व साकार हुआ है।

निराला हिंदी के पहले कवि हैं जिन्होंने काव्य-शिल्प की चली आती रूढ़ियों से पूरी तरह मुक्त होने का प्रयास किया। उन्होंने हिंदी कविता को छंद के बंध से मुक्त किया। इसका अर्थ यह नहीं है कि उन्होंने छंदबद्ध कविता नहीं लिखी वरन् सच्चाई यह है कि परंपरागत छंदों में नए प्रयोग करके उन्हें नया निखार दिया और कई नए छंदों का निर्माण भी किया। अपनी मुक्त छंद की कविता में भी उन्होंने लय और संगीत का समुचित समावेश किया।

निराला के अपने शब्दों में कहा जाए तो उन्होंने भावों के साथ ही 'भाषा और छंद के प्रयोग में उलटी गंगा बहाई है।' कहने का तात्पर्य यह कि भाव-योजना के साथ ही संरचना-शिल्प के परंपरागत मानदण डों का परित्याग कर कविता में उन्होंने सर्वाधिक प्रयोग किए हैं। इस प्रक्रिया में उन्होंने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र को प्राय: बिंबो के माध्यम से व्यक्त करने का प्रयास किया है। यह बिंबात्मकता उनके शिल्प की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता है।

प्रतिपाद्य

निराला की कविताओं में जो सामाजिक और यथार्थ दृष्टि देती है, वह उनके जीवन-संघर्षों की ही देन है। निराला को जीवन-भर जो दु:ख और अपमान झेलने पड़े, उनके कारण उनका स्वर सामाजिक अन्याय और आर्थिक शोषण के विरुद्ध प्रबल वेग से उमड़ पड़ा। निराला यद्यपि सौंदर्य और प्रेम के भी कवि हैं और ऐसी कविताओं का अपना अलग आकर्षण है। लेकिन जीवन संघर्षों ने उन्हें समाज के प्रति अधिक सजग बनाया। निराला शुरू से ही मूलभूत परिवर्तनों के पक्षधर रहे हैं। उन्होंने 22-23 में अपनी श्बादल रागश शीर्ष कविताओं में ही शोषक और उत्पीड़क वर्ग पर आघात किया था और किसान को क्रांति का दूत कहा था। बाद में तो उनका स्वर शोषक वर्ग के प्रति अधिकाधिक कटु होता गया जो श्बेलाश तथा श्नये पत्तेश की कविताओं में व्यंग्य बनकर उभरा।

संदर्भ सहित व्याख्या

निराला की कविता तोड़ती पत्थरश की चर्चा हम उपर्युक्त विवेचन में कर चुके हैं। आप स्वयं कविता का ध्यानक वाचन कर उसकी व्याख्या कर सकते हैं।

बोध प्रश्न

नीचे दिए गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. 'तोड़ती पत्थर' कविता का प्रतिपाद्य क्या है?

   (क) सामाजिक वैषम्य (ख) प्रकृति सौंदर्य

   (ग) नारी-सौंदर्य (घ) आत्म-संघष

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

2. निराला का काव्य-शिल्प की दृष्टि से प्रमुख क्या योगदान है?

(क) नए अलंकारों का प्रयोग (ख)

(ग) नए प्रतीकों का प्रयोग (घ) लय के बंधन से मुक्ति

अभ्यास

कोई न छायादार

पेड़ वह जिसके तले बैठी हुई स्वीकार,

श्याम तन, भर बँध यौवन, नत नयन,

प्रिय कर्म रत मन

गुरु हथौड़ा हाथ,

करती बार-बार प्रहार

सामने तरु मालिका अट्टालिका, प्रकार।

उपर्युक्त पंक्तियों की सरल भाषा में व्याख्या कीजिए।

.....

.....

3.7 महादेवी वर्मा

छायावाद के कवियों में महादेवी वर्मा का नाम भी अत्यंत सम्मान के साथ लिया जाता है। महादेवी वर्मा को 'आधुनिक मीरा' की संज्ञा दी गई है। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कि काव्य क्षेत्र में उनका स्थान कितना ऊँचा है। श्रीमती महादेवी वर्मा का जन्म 1907 ई. में फर्रुखाबाद (उत्तर प्रदेश) में हुआ। उन्होंने संस्कृत में एम.ए. किया और फिर जीवन-पर्यन्त प्राचार्य के रूप में शिक्षा के अवदान का कार्य किया। 11 सितम्बर, 1987 को उनका देहांत हो गया। 1983 में उन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। महादेवी वर्मा ने कविताओं के अतिरिक्त रेखाचित्र और संस्मरण भी लिखे थे। कविताओं की तरह उनके रेखाचित्र और संस्मरण भी अत्यंत उच्च-कोटि के हैं। महादेवी जी की प्रमुख काव्य पुस्तकें हैं: 'नीहार' (1930), 'रश्मि' (1932), 'नीरजा' (1934), 'सांध्य गीत' (1936) और 'दीपशिखा' (1942), 'प्रथम आयाम' (1984), श्यामाश (1936) में उनके आरंभिक संग्रहों की कविताएँ हैं। गद्य कृतियों में 'अतीत के चलचित्र', 'श्रृंखला की कड़ियाँ', 'स्मृति की रेखाएँ', 'क्षणदा' आदि प्रमुख हैं।

काव्य-वाचन

महादेवी जी अपने गीतों के लिए विशेष रूप से प्रख्यात हैं। यहाँ हम वाचन के लिए उनका एक प्रसिद्ध गीत दे रहे हैं।

मैं नीर भरी दुख की बदली।

स्पंदनश में चिर निस्पंदन बसा,

क्रंदन में आहत विश्व हँसा,

नयनों में दीपक से जलते,

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

टिप्पणी

पलकों में निर्झरिणीश मचली!
मेरा पग पग संगीत भरा,
श्वासों से स्वप्न-पराग झरा,
नभ के नव रँग बुनते दुकूल,
छाया में मलय-बयार पली!
मैं क्षितिज-भृकुटिश पर घिर धूमिल
चिंता का भार बनी अविरल,
रज-कण पर जल-कण हो बरसी,
नवजीवन-अंकुर बन निकली!
पथ को न मलिन करता आना,
पद चिह्न न दे जाता जाना,
सुधि मेरे आगम की जग में,
सुख की सिहरन हो अंत खिली!
विस्तृत नभ का कोई कोना;
मेरा न कभी अपना होना,
परिचय इतना इतिहास यही
उमड़ी कल थी मिट आज चली!

(1) कंपन (2) अचल (कंपन रहित) (3) विलाप (4) झरने से निकलने वाली छोटी नदी (5) रेशमी वस्त्र (6) दक्षिण की ओर से आने वाली हवा (7) भौं (8) आना

भाव पक्ष

महादेवी वर्मा की कविताएँ छायावाद के अन्य कवियों से इस अर्थ में भिन्न हैं कि उनमें उनका निजी संसार ही ज्यादा व्यक्त हुआ है। महादेवी जी के काव्य में वस्तुगत संसार बहुत सीमित है। वे प्राय: अपने मन की पीड़ा और वेदना को ही विभिन्न रूपों में प्रस्तुत करती हैं। उनकी कविताओं में प्रकृति के विभिन्न चित्र मिलते हैं, लेकिन वे उनके हृदय के मनोभावों की अभिव्यक्ति के माध्यम हैं। प्रकृति चित्र को वह एक दार्शनिक आवरण कभी दे देती हैं। वह लौकिक भावनाओं को ऐसी शब्दावली में प्रस्तुत करती हैं, जिनसे उनमें आध्यात्मिकता का आभास होने लगता है। इससे उनकी कविता में रहस्य भावना का समावेश हो गया है। वस्तुत: महादेवी की कविताओं में भी मुक्ति की आकांक्षा ही पृष्ठभूमि में विद्यमान है। लेकिन छायावाद के अन्य कवियों से भिन्न वे मुक्ति की इच्छा को सीधे व्यक्त नहीं करती। इसका कारण संभवत: उनका स्त्री होना है, जिसे बाह्य दबावों में अधिक जीना पड़ता है। यही कारण है कि उनके अकेलेपन और वेदना दोनों की अभिव्यक्ति ज्यादा है। प्रिय के प्रति चाह, मिलन की आकांक्षा और न मिल पाने की पीड़ा ही महादेवी की कविताओं का भाव-संसार है। लेकिन प्रिय कौन है और क्या है, यह कहीं स्पष्ट नहीं होता, इसी से रहस्यात्मकता का समावेश हुआ है। उपर्युक्त गीत में भी महादेवी जी का निज दुख ही व्यक्त हुआ है। लेकिन वह निज का दुख संसार की कल्याण-कामना से भी प्रेरित दिखाई देता है।

द्वापर काव्य के उद्धव सर्ग का गोपियों के

संरचना शिल्प

महादेवी वर्मा के काव्य में शिल्पगत विविधता भी कम है। उनका झुकाव गीतों की ओर ही रहा है। चूंकि उनकी प्रवृत्ति अंतर्मुखी भावनाओं को व्यक्त करने की ओर रही है, और ऐसी भावनाएँ गीतों में अधिक तन्मयता और तीव्रता से व्यक्त हो सकती है, इसलिए उन्होंने गीतों की ही रचना अधिक की है। महादेवी के गीतों में वेदना की गहराई, अनुभूति की सघनता और हृदय की तरलता का आभास मिलता है। गीतों में प्रकृति चित्रण करते हुए नारी हृदय की सुकुमारता और विरह-जन्य वेदना का आभास धूमिल नहीं होता।

महादेवीजी की भाषा में मधुरता है। उनके यहाँ प्रेमानुभूति और विरहानुभूति दोनों को व्यक्त करने वाले शब्दों का प्रयोग हुआ है। प्रेम, विरह और अकेलेपन की भावनाओं को व्यक्त करने के लिए वह दीपक, शलभ, चातक, प्रातः, संख्या, रजनी, बादल, पथ जैसे प्रतीकों का प्रयोग करती हैं। इस दृष्टि से उनके प्रतीकों में जटिलता नहीं है और उनके माध्यम से व्यक्त भाव आसानी से खुल जाते हैं। लेकिन जब वे प्रतीकों को आध्यात्मिक चेतना से जोडती हैं तब भाषा में जटिलता का समावेश हो जाता है और प्रतीक भी दुरुह हो जाते हैं। 'सुधि मेरे आगम की जग में सुख की सिहरन हों अंतखिली' जैसी पंक्ति इसका प्रमाण है।

उपर्युक्त कविता भी दो स्तरों पर अर्थ व्यक्त करती है। एक तो प्रकृति-चित्र के रूप में। दूसरे कवयित्री की निजी पीड़ा की अभिव्यक्ति के रूप में। इस दूसरे अर्थ पर वे रहस्य का आवरण भी डाल देती है। 'क्रंदन में आहत विश्व हँसा' के माध्यम से वे बदली के कल्याण-कार्य को संकेतित करती है। या शक्षितिज भृकुटि पर घिर धूमिलश में रहस्य भावना का आभास है तो दूसरी ओर 'विस्तृत नभ का कोई कोना/मेरा न कभी अपना होनाश जैसी पंक्तियाँ स्वयं उनकी अपनी पीड़ा को व्यक्त करती हैं।

महादेवी के गीतों में प्रकृति-सौंदर्य की अद्भूति छटा है। प्रकृति का यही वह वैविध्य उनके यहाँ नहीं है जो निराला और सुमित्रानंदन पंत के यहाँ है, लेकिन उनके प्रकृति के चित्रों में सौंदर्य और माधुर्य दोनों है। रहस्यवादी आग्रह के कारण उनकी कविताओं में ऐसे प्रतीकों का भी प्रयोग हुआ है जिनसे बिंबों में प्रकृति की विराटता का भी बोध होता है। प्रकृति के मानवीकरण की प्रवृत्ति उनमें बहुत अधिक है। यह पूरा गीत मानवीकरण का उदाहरण है।

प्रतिपाद्य

महादेवी वर्मा की कविता में यद्यपि नारी हृदय की पीड़ा ही अधिक व्यक्त हुई है, लेकिन उसमें व्यक्त अनुभूति की सच्चाई और तीव्रता ने उसे अत्यंत संवेदनीय बना दिया है। महादेवी जी के गीतों में व्यक्त नारी हृदय की पीड़ा मिथ्या या रहस्यवादी नहीं है। उसमें अपने जीवन की सच्चाई है। बाह्य दबावों के बीच हृदय की मुक्ति की इच्छा को जिन प्रतीकों और रूपों में नारी व्यक्त करती है, शायद वही पद्धति महादेवी के गीतों में भी दिखाई देती है। स्वतंत्रता आंदोलन के दौर में नारी जाति में जो मुक्ति की छटपटाहट प्रकट हो रही थी, उसका आभास हम उनके गीतों में देख सकते हैं। महादेवी जी के गीतों को हमें इसी संदर्भ में समझने का प्रयास करना चाहिए।

संदर्भ सहित व्याख्या

महादेवी वर्मा का उपर्युक्त गीत अत्यंत प्रभावशाली है। गीत के कठिन शब्दों के अर्थ साथ ही दे दिए गए हैं तथा गीत के भाव और शिल्प की विशेषताएँ उपर्युक्त विश्लेषण में स्पष्ट की जा चुकी है। इस आधर पर आप स्वयं कविता को समझने की कोशिश कीजिए।

टिप्पणी

3.8 सारांश

आपने इस इकाई का अध्ययन ध्यानपूर्वक किया होगा। इस इकाई में हमने निम्नलिखित बिंदुओं की चर्चा की थी

- साहित्य की एक प्रमुख विध, कविता से आपका परिचय कराया गया है और हिंदी के पाँच प्रतिनिधि कवियों की कुछ कविताओं का वाचन किया गया है। इससे आपको हिंदी काव्य का संक्षिप्त परिचय प्राप्त हुआ है। अब आप पठित कवियों की काव्य-प्रवृत्तियों की विशेषताएँ बता सकते हैं।
- पठित कवियों का जिन काव्य-धराओं से संबंध था, उनकी विशेषताओं का भी इकाई में उल्लेख किया गया है। अब आप भक्ति काव्य, द्विवेदी-युगीन काव्य और छायावाद की प्रमुख विशेषताएँ बता सकते हैं।
- पठित कवि सूरदास, तुलसीदास, मैथिलीशरण गुप्त, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला एवं द्य महादेवी वर्मा के काव्य के विभिन्न पक्षों का संक्षिप्त विश्लेषण किया गया है। अब आप स्वयं संक्षेप में इन कवियों की काव्यगत विशेषताएँ बता सकते हैं।
- उपर्युक्त कवियों की पठित कविताओं की व्याख्या कर सकते हैं एवं उनकी विशेषताएँ बता सकते हैं।

3.9 अभ्यास प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. महादेवी जी के गीतों की केंद्रीय विशेषता एक पंक्ति में बताइए।
2. महादेवी जी के काव्य में व्यक्त रहस्य भावना का अर्थ तीन पंक्तियों में स्पष्ट कीजिए।
3. महादेवी जी की काव्य-भाषा की दो विशेषताएँ बताइए।
3. निराला के काव्य शिल्प की दो विशेषताएँ बताइए।
4. 'साकेत' में उर्मिला के चरित्र को इतना महत्व क्यों दिया गया है?
5. गुप्तजी की काव्य-भाषा की दो विशेषताएँ बताइए।

विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. गुप्तजी की अतीत के प्रति क्या दृष्टि थी?
2. तुलसीदास की दृष्टि में राम के अवतार का क्या कारण था?
3. तुलसीदास के 'रामराज्य' की विशेषताएँ बताइए।
4. तुलसीदास की काव्य-भाषा की दो विशेषताएँ बताइए।
5. 'कीरति भनिति भूति भल सोई। सुरसरि सम सब कहुँ हित होई।।' इन पंक्तियों का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

♦♦♦♦♦

इकाई 4

सूर्यकांत त्रिपाठी “निराला”

पाठ-संरचना

4.1 प्रस्तावना
4.2 जीवन परिचय
4.3 साहित्यिक अवदान
4.4 काव्यगत विशेषताएँ
4.5 भगवान बुद्ध के प्रति
4.6 अभ्यास प्रश्न

टिप्पणी

4.1 प्रस्तावना

डॉ. पदम सिंह शर्म 'कमलेश' ने ठीक कहा है "कुछ साहित्यकार ऐसे होते हैं जिनका जीवन तो महान नहीं होता पर साहित्य महान् होता है। इसके विपरीत कुछ साहित्यकार ऐसे होते हैं जिनका जीवन महान् होता है पर उनका साहित्य महान् नहीं होता है, किन्तु कुछ साहित्यकार ऐसे भी होते हैं जिनका जीवन और सहित्य दोनों ही महान् होते हैं। निराला जी ऐसे ही साहित्य-सृष्टा थे। उनका जीवन और साहित्य दोनों ही असाधरण ऊँचाई लिए हुए हैं। वास्तव में जितने अधिक तर्क-वितर्क विरोधी धरणाएँ और अद्‌भुत मत विराला को लेकर हैं, इतने शायद अन्य किसी हिन्दी साहित्यकार को लेकर आज तक नहीं हुए हैं। इसका सबसे बड़ा कारण है निराला के जीवन और व्यक्तित्व में परस्पर विरोधी तत्वों का निहित होना और उनका विचित्र होना। महाप्राण निराला के काव्य में कोमल और कठोर पक्षों का, अध्यात्म और व्यवहार का, भावुक एवं क्रांतिकारी रूप का विशेष परिचय दिया गया है। निराला छायावाद के सर्वाधिक चर्चित कवि रहे हैं उनके विराट और उदात्त व्यक्तित्व की झलक हमें उनके सम्पूर्ण साहित्य में देखने को मिलती है। निराला की तरह ही उनका काव्य जगत भी निर्बन्ध है। व्यंग्य विनोद का तीखा और उन्मुक्त रूप, यथार्थ का जीवन्त चित्रण एवं सामाजिक जीवन की कटु अनुभूतियों का सजीव निरूपण हमें निराला काव्य में एक ओर देखने को मिलता है तो दूसरी ओर सुसंस्कृत भाव चेतना का वह रूप भी मिलता है जहाँ काव्य अध्यात्मक की स्वत: ही अद्वैतपरक व्याख्या करता है। निराला सार्वभौम प्रतिभासम्पन्न कलाकार हैं। काव्य, कहानी, निबंध, संस्मरण तथा उपन्यास आदि साहित्य की विविध विधओं में उनकी प्रतिमा समान रूप से शोभा पाती है। हिन्दी साहित्य में निराला को पौरूष के कवि कहकर समानित किया जाता है।

4.2 जीवन परिचय

निराला जी की जन्म विधि के सम्बन्ध में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। पं. रामनरेश त्रिपाठी के मतानुसार 'निराला का जन्म-माघ सुदी एकादशी सम्वत् 1955 को हुआ।' डॉ. श्यामसुन्दर दास और विश्वम्भर मानव (काव्य का देवता-निराला) इसको सही बताते हुए सम्वत् 1953 मानते हैं। रामविलास शर्मा, बच्चन सिंह, राहुल और स्वयं निराला बसन्त पंचमी सम्वत् 1953 (1896) को जन्म दिवस मानते हैं जबकि निराला के पुत्र श्री रामकृष्ण साप्ताहिक हिन्दू निराला अंक इसको 1890 मानते हैं। सामान्यत: उनका स्थान महिषा दल, जिला मेंदिनीपुर (बंगाल) माना जाता है यद्यपि कुछ आलोचकों के अनुसार 'इनकी धमनियों में उन्नाव जिले (उत्तर प्रदेश) के बैसवाड़े का प्रभाव था।' सामान्य रूप से निराला का जन्म सन् 1896 ई. में बसंत पंचमी के दिन हुआ माना जाता है। निराला के पिता का नाम पण्डित राम सहाय त्रिपाठी और माता का नाम रूक्मिणी देवी था। अनुश्रुति है कि उनकी माता सूर्य का व्रत रखा करती थी और निराला का जन्म भी रविवार को हुआ। यही कारण है कि उनका नाम सुर्जकुमार रखा गया। कुछ लोगों का कहना है कि उनका जन्म महावीर हनुमान की पूजा के दिन मंगलवार को हुआ। निराला के पिता महावीर के भक्त थे। यही सोचकर पण्डित ने उनका नाम सुर्जकुमार रख दिया। लेकिन सन् 1917-18 के लगभग उन्होंने अपना नाम बदलकर सूर्यकान्त त्रिपाठी कर लिया और निराला उपनाम उन्होनें 'मतवाला' पत्र के सम्पादन काल में रखा। सिपाहियों के साथ रहकर उन्होंने सीखी घर पर बैसवाडी बोली जाती थी। इस प्रकार से निराला ने बंग्ला, संस्कृत, अंग्रेजी, हिन्दी और अवधी का ज्ञान इन्होंने हाई स्कूल में ही अर्जित कर लिया था। हिन्दी की पत्र-पत्रिकाओं विशेषकर 'सरस्वती' से उन्हें विशेष लगाव अनुभव हुआ और हिन्दी में लिखने की प्रेरणा भी उन्होंने यहीं से प्राप्त की।

शिक्षा अर्जन के साथ-साथ निराला को अपने शारीरिक विकास का अवसर भी मिला। कुश्ती लड़ने, घुड़सवारी करने एवं बंदूक चलाने में निराला ने विशेष योग्यता अर्जित कर ली। इसके अतिरिक्त संगीत

टिप्पणी

में भी उनकी गहन रूचि थी। निराला का कण्ठ-स्वर बहुत ही सध हुआ था। अपनी स्कूली शिक्षा को निराला ने हाई स्कूल के बाद ही विराम दे दिया। कारण निराला को किसी ने कह दिया कि प्रतिभाशाली व्यक्ति कभी परीक्षाओं के चक्कर में नही पड़ते, स्वयं रवीन्द्रनाथ नवीं पास हैं। बस निराला ने ठान लिया किरवीन्द्र से कम थोड़े ही हैं और उन्होंने भी परीक्षा नहीं दी तांकि नवीं कक्षा पास ही रहे। निराला का विवाह चौदह वर्ष की आयु में मनोहरा देवी के साथ हुआ। मनोहरा देवी देखने में तो मनोहर ही थीं, गुण सम्पन्न और गृह कार्य में दक्ष भी थीं। निराला को हिन्दी में साहित्य-सुजन करने की प्रेरणा भी मनोहरा देवी से ही मिली। निराला अपनी पत्नी के प्रति अनन्य प्रेम का भाव रखते थे, किंतु निराला का वैवाहिक जीवन चार-पाँच वर्ष की अल्प सीमा पर आकर बिखर गया। पत्नी की मृत्यु से निराला का अन्तर्मन टूट कर बिखर गया। निराला के काव्य में इस पीड़ा की गहन अभिव्यक्ति देखने को मिलती है। कवि की यह पीड़ा यहीं समाप्त नहीं हो जाती है, परिवार के अनेक सदस्य इसी बीच निराला को छोड़कर संसार से विदा हो गए। निराला के भावुक मन के लिए पत्नी-विछोह वज्रपात से कम नहीं था, ऊपर से अपने दो बच्चों और परिवार के अन्य बच्चों के पालन-पोषण की व्यवस्था का भार भी इन्हीं पर आन पड़ा। इन सभी विषय परिस्थितियों में निराला के व्यक्तित्व का निर्माण हुआ। निराला के व्यक्तित्व में एक ओर करूणा तथा जगती की नश्वरता का भाव मिला है तो दूसरी ओर विद्रोह एवं क्रांति का स्वर भी मिला है।

निराला के जीवन में दु:ख और अभावों का सिलसिला जीवन-पर्यन्त चलता रहा। पत्नी की मृत्यु के पश्चात् जो अनन्य जबरदस्त आघात उन्हें लगा, वह था पुत्री 'सरोज' का युवावस्था में अकाल मृत्यु मुख में चले जाना। एक के बाद एक प्रिय जन के विछोह में निराला जहाँ टूटे हैं, वहीं अपने अंतर से शक्ति-ग्रहण कर जीवन-संघर्षों से जूझे भी हैं। यही कारण है कि निराला के व्यक्तित्व में हम संघर्ष प्रियता, रूढियों के विरोध तथा विद्रोह के स्वर को विशेष रूप से देखते हैं। दूसरी ओर करूणा का ऐसा मोहक रूप पाते हैं जो दूसरों के दु:खों और अभावों में अपनी वास्तविक स्थिति को भूल जाता है। अनेक बाह्य व्यक्तित्व की झलक कुछ इस प्रकार थी- श्कद लगभग छ: फुट चौड़ा सीना, विशाल मस्तक, दिव्य तेज से परिपूर्ण आँखे विशाल बाहु, लम्बे बाल इसी कारण कोई उन्हें 'अपोलो' कहता है तो कोई 'विवेकानन्द'। सन् 1920 ई. में राज्य की नौकरी छोड़कर पूर्ण संकल्प से निराला ने साहित्यिक जीवन में प्रवेश किया और अन्त तक उसी को ही अपना जीवन मानकर चले। 15 अक्टूबर 1961 को महाप्राण निराला ने अपने इस नश्वर शरीर को त्याग दिया।

4.3 साहित्यिक अवदान

महाकवि निराला का जीवन वैविध्यपूर्ण है, इसलिए उनका काव्य भी अनेक विलक्षणताओं से भरा हुआ है। जीवन के अनेक रूपों को कवि ने देखा और भोगा है। प्रतिकूल परिस्थितियों ने उनके कवि-मानस को तराशा और उन्हें समर्था सृजक के रूप में साहित्य जगत में प्रतिष्ठित किया। छायावादी काव्य का आरम्भ सन् 1918 के आसपास माना जाता है। निराला की प्रथम रचना 'जूही की कली' में ही प्रेम का यह रूप देखा जा सकता है, जिसमें सूक्ष्म सौंदर्य का चित्रण है और दूसरी ओर चित्रित सौंदर्य अनन्त काल का अचल भी स्पर्श करता दिखाई पड़ता है। साथ ही साथ कवि ने रति-क्रीड़ा के चित्र को एक प्रतीक के रूप में भी परिवर्तित कर दिया है। यही निराला की रूप में अरूप की उपासना है।

'सोती थी, जाने कहो' केसे प्रिय आगमन वह?
नायक ने चूमे कपोल
इस पर जागी नहीं

टिप्पणी

निर्दय उस नायक ने
निपट ठकुराई की,
कि झोकों की झाड़ियों से
सुन्दर सुकुमार देह सारी झकझोर डाली,
मराल दिये गोरे कपोल गोल'।

उपर्युक्त उदाहरण में तटस्थता, पवित्रता, अलौकिकता, स्वच्छन्दता और विरह प्रधनता निराला के प्रेम-भाव की विशेषताएँ हैं। 'प्रिया के प्रति', 'प्रिया से', 'रेखा', 'नयनों का बन्धनल' आदि कविताओं में निराला के प्रेम का यही रूप मुखरित हुआ है।

निराला साहित्य साधना में पूरी तन्मयता से लीन थे। निराला की प्रारम्भिक तन्मयता से लीन थे। निराला की प्रारम्भिक रचनाओं में 'अनामिका' (प्रथम) (सन् 1936) एवं 'परिमल' (द्वितीय) (सन् 1938) हैं। अनामिका (प्रथम) में मात्र सात कविताएँ थीं। वे आगे चलकर अन्य संग्रहों में ले ली गईं। वास्तव में 'परिमल' को ही उनकी प्रथम काव्य कृति होने का गौरव प्राप्त है। इससे पूर्व निराला 'मतवाला' में 'जूही की कली' नामक कविता के माध्यम से साहित्य जगत में अपने कवि रूप की पहचान बना चुके थे। 'परिमल' में निराला लिखित 1930 तक की कविताएँ संकलित हैं। स्वच्छन्द छन्द की कविताएँ उनके इस प्रारम्भिक सृजन में प्राप्त हो जाती हैं। "परिमल" में लगभग 78 रचनाएँ हैं जिन पर दृष्टिपात करने से स्पष्ट हो जाता है कि अनेक काव्य की अनेक धराओं में बहने की अपरिमित सम्भावनाएँ निहित हैं। इस काव्य संग्रह के अधिकांश गीत दार्शनिकता एवं आध्यात्मिकता की भावना से परिपूर्ण हैं। कुछ कविताएँ राष्ट्रीय, सांस्कृतिक चेतना को वाणी प्रदान करने वाली हैं। समाज के दलित एवं पीड़ित वर्ग के प्रति कवि-हृदय में जो असीम करूणा का भाव रहा वह भी 'परिमल' की कविताओं में मुखरित हुआ। निराला का प्रसिद्ध गीत 'तुम और मैं', 'माया', 'विधवा', 'भिक्षुक', 'बादल राग' एवं 'जागो फिर एक बार' आदि 'परिमल' की अनेक रचनाएँ हैं जो निराला के समर्थ कवि रूप को साहित्य लोक में स्थापित कर गई।

'परिमल' के पश्चात् निराला ने लगभग 101 गीतों के संग्रह के रूप में 'गीतिका' की सृष्टि की। इस संग्रह की कविताओं में निराला ने कई प्रयोग किए हैं। अद्वैतवादी काव्य रचनाओं की संख्या यहाँ पर्याप्त मात्र में देखी जा सकती है। 'कौन तम के पार रह कह' एवं 'पास ही रे हीरे की खान' आदि गीतों में रहस्य की भावना का संस्पर्श स्पष्टत: देखा जा सकता है। सन् 1938 में निराला का तीसरा काव्य संग्रह अनामिका प्रकाशित हुआ। इसमें कुछ 56 कविताओं को संगृहीत किया गया है। इसमें मौलिक और अनूदित दोनों प्रकार की रचनाएँ एक साथ रखी गई हैं। 'सरोज स्मृति', 'वह तोड़ती पत्थर' और 'राम की शक्ति पूजा' विशेष चर्चित काव्य रचनाएँ हैं। इसमें भी 'यम की शक्ति पूजा' सबसे अधिक सशक्त और प्रौढ़तम रचना मानी जाती है। निराला के कृतित्व की अन्य महत्वपूर्ण उपलब्धि है- 'तुलसीदास'। महाकाव्योचित शैली में रचित यह प्रबन्ध कृति निराला काव्य की अक्षय-कीर्ति का आधर है।

साहित्य में सर्वध नए आयाम को लाने वाली रचना 'कुकुरमुत्ता' निराला के सृजक रूप को एक नया मोड़ प्रदान करती है। इसकी भाषिक संरचना ठेठ शब्दावली पर आधरित है। 'कुकुरमुत्ता' में काव्य के पारम्परिक मानदण्डों से पूर्णत: भिन्न शैली को कवि ने अपनाया है। 'अणिमा', 'बेला' और 'नये पत्ते' आदि काव्य संग्रह प्रगतिशील एवं प्रयोगवादी रचनाओं से अनुष्ठित हैं। 'अणिमा' में कवि की एकाकी भावना की पीड़ा और भक्ति का स्वर भी यंत्र-तंत्र देखा जा सकता है। प्रयोगवादी ढर्रे की कविता 'चूँकि यहाँ दाना है' अपनी विचित्र प्रकार की संरचना के कारण उल्लेखनीय है। इस कविता में पूँजीवादी संस्कृति पर तीखा व्यंग्य प्रहार किया गया है। 'बेला' में निराला ने अनेक रंगों के गीतों की सृष्टि की है।

टिप्पणी

'अर्चना', 'आराधना', 'गीत मुंज' ये तीनों गीत संग्रह निराला की अन्तिम स्थिति हैं। निरन्तर संघर्षों से जूझने के कारण निराला का मानसिक संतुलन डगमगा गया, उस अवस्था का रूप इन गीतों में कहीं-कहीं देखा जा सकता है। इसके अतिरिक्त भक्ति भावना, विनय और प्रार्थना मिश्रित करूणा की आभा किए कुछ गीतों की भी रचना उन्होंने की है। काव्य के अतिरिक्त निराला ने 'निरूपमा', 'अपसरा', 'प्रभावती' तथा 'काले कारनामें' आदि उपन्यासों की भी रचना की है। कहानी के क्षेत्र में निराला की महत्वपूर्ण देन 'लिली', 'देवी', 'सखी', 'सुकुल की बीवी' और 'चतुरी-चमार' है। 'कुल्लीभाट' और 'बिल्ले सुर न करिहा' इनके प्रसिद्ध रेखाचित्र हैं। श्रेष्ठ समालोचक और समीक्षक के रूप में निराला की 'रवीन्द्र कविता कानून', 'पन्त और पल्लव', 'चाबुक', 'प्रबन्ध पद्य', 'प्रबन्ध प्रतिभा' तथा 'चयन' आदि कृतियों का विशेष महत्व है। निराला की साहित्य यात्र का परिचय यह स्पष्ट करता है कि ये सभी रचनाएँ एक समर्थ सृजक के अन्तर्मन की अनेक स्थितियों को आभासित करती हैं निश्चय ही महाप्राण निराला का साहित्य भी महान है।

4.4 काव्यगत विशेषताएँ

निराला नब जागरण काल के कवि हैं। राष्ट्र को पराधीनता के बंधन से मुक्त देखने की लालसा उस काल के प्राय: सभी कवियों के काव्य का मुख्य विषय रहा है। निराला काव्य में राष्ट्रीय भावना का धरातल बड़ा विस्तृत और बहुरंगी है। निराला ने असंख्य गीतों में भारत के गौरव का गान, माँ भारती का सतश: स्मरण कर जातीय जीवन में उत्तेजना के प्राण फॅके हैं। भारतीय जन मानस में उद्‌बोधन का संचार करते हुए निराला 'तुलसीदास' में जागरण का संदेश इस प्रकार से देते हैं:

'जागो, जागो आया प्रभात,
बीती वह, बीति अन्धरात।'

इसके लिए कवि आत्म बलिदान हेतु माँ भारती के चरणों में भावपूर्ण समपर्ण करते हुए कहता है:

'बाधएँ आएँ तन पर
देखू तुझे नयन निर्भर
क्लेदयुक्त अपना तन दूंगा
मुक्त करूँगा तुझे अटल,
तेरे चरणों पर देकर बलि
सकल श्रेय-श्रम-सिंचित फल।'

राष्ट्रीयता के अतिरिक्त अद्वैत तत्व की सम्वेदना का संस्पर्श निराला काव्य की अन्तर्वस्तु में मुख्यता से गाया जाता है। निराला के जीवन पर रामकृष्ण परमहंस एवं विवेकानन्द के विचारों का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। 'परिमल', 'अनामिका', 'गीतिका', 'अर्चना', 'बेला' एवं 'अणिमा' इत्यादि में निराला की अद्वैत भावना को देखा जा सकता है। निराला काव्य में पीड़ा एवं करूणा की गहरी व्यंजनाएँ देखने को मिलती हैं। कवि की संवेदना का विस्तार स्तर से लेकर जगती की विभिन्न बदलती हुई परिस्थितियों तक छाया हुआ है। निराला जी का काव्य भावपक्ष की दृष्टि से अत्यन्त सबल और प्रौढ़ है। उनके काव्य का भावपक्ष उनके व्यक्तित्व के अनुरूप है। निराला जी जीवन-पर्यन्त विद्रोह में संघर्ष करते रहे। अत: उनकी कविता में स्वच्छन्दता एवं विद्रोह का प्रखर रूप से मुखरित हुआ है। निराला जी के काव्य में प्रेम तत्व की भी प्रधनता है। वे मौन प्रेमी हैं। निराला जी सौन्दर्य प्रेमी कवि हैं।

टिप्पणी

उनके काव्य में सौन्दर्य के स्थूल और सूक्ष्म दोनों रूपों के दर्शन होते हैं। उनके काव्य में देश प्रेम की भावना का भव्य रूप साकार हुआ है। उन्होंने देशवासियों में चेतना और जागृति को जन्म देने के लिए अपने देश के प्राचीन वैभव का चित्रण किया है। उनकी 'भारती वन्दना', 'जागो फिर एक बार', 'तुलसीदास' आदि कविताओं में देश प्रेम की भावना प्रकट हुई है। उनके काव्य में सामाजिक चेतना का स्वर भी मुखरित हुआ है। निराला जी ने सर्वत्र प्रकृति पर चेतना का आरोप किया किया है। निराला जी के काव्य में रहस्यवादी, छायावादी और प्रगतिवादी भावनाओं का सुन्दर समन्वय देखने को मिलता है। निराला जी का कलापक्ष भी भावपक्ष की भाँति बहुत पुष्ट है। उनकी भाषा शुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली है। उनकी भाषा में संस्कृत के तत्सम शब्दों का प्रचुर मात्र में प्रयोग देखने को मिलता है। कोमल कल्पना के अनुरूप उनकी भाषा की पदावली भी कोमलकान्त हैं निराला जी की भाषा में जहाँ दर्शन, चिन्तन अथवा विचार-तत्व की प्रधनता है, जहाँ उनकी भावना क्लिष्ट हो गई है। निराला जी ने अपने काव्य में गीति शैली को मुख्य रूप से अपनाया है।

उनकी शैली में प्रतीकात्मकता, लाक्षणिकता, चित्रात्मकता और गीतात्मकता जैसे गुण विद्यमान हैं। छन्द के क्षेत्र में निराला जी ने नवीनता का परिचय दिया हैं उन्होंने अपने काव्य में प्राय: मुक्त छन्द का प्रयोग किया है। साथ ही उर्दू और अंग्रेजी के छन्दों का भी प्रयोग आवश्यकता के अनुसार किया हैं उन्होंने अलंकारों का प्रयोग चमत्कार-प्रदर्शन के लिए नहीं किया है। उनके काव्य में अलंकार साधन मात्र हैं। इस प्रकार निराला जी का काव्य जीवन के श्रेष्ठतम मूल्यों से अनुप्राणित है। वे एक युगान्तकारी कलाकार हैं। उनके भाव, भाषा, शैली, छन्द आदि सभी हिन्दी कविता में नवीनतम स्वच्छन्दता की गाथा गा रहे हैं। वे नवीनता के सम्राट हैं। उनकी कविता में छायावादी और प्रगतिवादी दोनों युगों की विचारधराओं का सुंदर समन्वय है। श्रृंगार, रहस्यवाद, छायावाद, राष्ट्रप्रेम, प्रकृति-वर्णन के अतिरिक्त शोषण और वर्ग-भेद के विरूद्ध शोषितों एवं दीन-हीन जन के प्रति सहानुभूति तथा पाखण्ड और प्रदर्शन के प्रति व्यंग्य उनके काव्य की मुख्य विशेषताएँ हैं। वास्तव में निराला जी सभी दृष्टियों से निराले हैं। हिन्दी-साहित्य में इस महाकवि का महत्व अक्षुण्ण है।

4.5 भगवान बुद्ध के प्रति

"वहाँ बिना कुछ कहे, सत्य-वाणी के मंदिर
जैसे उतरे थे तुम, उतर रहे हो फिर फिर
मानव के मन में-जैसे जीवन में निश्चित
विमुख भोग से, राजकुँवर त्यागकर सर्वस्थित
एकमात्र सत्य के लिए, रूढ़ि से विमुख, रत
कठिन तपस्या में, पहुँचे लक्ष्य को, तथागत!"

उपरोक्त पंक्तियाँ निराला द्वारा लिखित 'भगवान बुद्ध के प्रति' कविता की हैं। प्रस्तुत पंक्तियों में कवि ने स्वार्थ त्याग करने का उपदेश दिया है। लोभ वृत्ति से मानव केवल अतृप्त रहता है। तृप्ति का मार्ग केवल-अन-केवल स्वार्थ त्याग वृत्ति है। कवि कहता है, हे राजकुँवर अपना सर्वस्व त्यागकर तुम कठिन तपस्या से महामानव बने। तेरी ज्योति विश्व में फैल गयी। तुम्हारे विचार, तुम्हारी वृत्ति की आवश्यकता आज समाज को है। आज का मानव, समाज, देश, राज्यलिप्सा में डुबा है। कवि के विचार हैं कि स्वार्थी वृत्ति त्यागकर समाज के उद्धार के लिए, शांति के लिए हमें कार्य करना चाहिए। जैसे सम्राट अशोक ने किया है। सम्राट अशोक की राज्यलिप्सा सर्वख्यात है। इस राज्यलिप्सा में उसने कितना

टिप्पणी

नरसंहार किया। हिंसा का दूसरा नाम ही सम्राट अशोक था। राज्य विस्तार ही उसके जीवन का उद्देश्य रहा, पर उसने अपनी हिंसक, स्वार्थी वृत्ति का त्याग कर समाज में शांति लाने का कार्य किया। सम्राट अशोक नर संहार से जितना संसार को ख्यात है, उससे ज्यादा ख्यात वह समाज प्रबोधक के रूप में है। "विचारपरक कविता का विकास अनुभव की ही जमीन पर जन्म लेता है, पलता और पोषित होता है। विचार हवा में तैरते नहीं फिरते। वे जीवन यथार्थ के संघर्षों संबंधें व्यवहारों की आपसी टकराहट से पैदा होते हैं और विकसित होते है।" कवि के विचार दृष्टि के पीछे उसका स्वयं का अनुभव, समाज दर्शन होता है। निराला की पंक्तियाँ दृष्टव्य है, आज सभ्यता के वैज्ञानिक जडविका पर / गर्वित विश्व नष्ट होने की ओट अगेसर

स्पष्ट दिख रहा; सुख के लिए खिलौने जैसे
बने हुए वैज्ञानिक साधन, केवल पैसे
आज लक्ष्य में है मानव के; स्थल-जल-अंबर
रेल-तार-बिजली-जहाज नभयानों से भर
दर्प कर रहें मानव, वर्ग से वर्गगण
भिडे राष्ट्र से राष्ट्र, स्वार्थ से स्वार्थ विचक्षण।"

'भगवान बुद्ध क्र प्रति कविता की उपरोक्त पंक्तियों में निराला ने वैज्ञानिक पगति और मानव अपने स्वार्थ के लिए इसका उपयोग कैसे करता है। आज विज्ञान ने प्रगति तो बहुत की है, लेकिन अपने मिथ्या अभिमान से मानव तथा देशों में गर्विता आ गयी है। विज्ञान का उपयोग कर मानव ने भौतिक सुख-सुविधओं में वृद्धि की है। बहुत पैसा कमाया है। विज्ञान के कारण मानव ने जल-पृथ्वी और आकाश अपनी मुट्ठी में किया है। बड़ी-बड़ी रेलगाड़ियाँ, जहाज, हवाई जहाज, भ्रमणध्वनि, ई-मेल से दुनिया नजदीक आयी है। पर विज्ञान नायक के साथ खलनायक को भी जन्म देता है। विज्ञान की प्रगति से मानव का घमंड बड़ता गया है। दुनिया पर शासन करने की हर एक देश की लालसा है। हर देश संरक्षण के नाम पर परमाणु शास्त्र का विकास कर रहा है। इस विकास ने मानव को मानव से दानव बना दिया है। बड़े-बड़े बुद्धिमान दूरदृष्टि रखने वाले विद्वान भी इसका शिकार हुए हैं।

इस कविता का प्रकाशन काल 1940 ई. है। इस समय पहला विश्व युद्ध हो चुका था। आज कई देशों ने परमाणु ऊर्जा का उपयोग मानवता के विकास में न कर उसके विरूद्ध में किया है। ऐसा ही रहा तो एक दिन पूरे विश्व का विनाश अटल है। यही बात निराला ने अपने विचारों के माध्यम से समाज के सामने रखी है और समझाने की कोशिश की है कि विज्ञान का उपयोग मानव जाति के हित में करो। यहाँ निराला की दूरदृष्टि दिखाई देती है। धर्मिक कट्टरता एवं तंत्रज्ञान, विज्ञान के संदर्भ में भगवत रावत कहते हैं, "धर्मिक कट्टरता और टेक्नोलॉजी के आतंक के बीज हम जी रहे हैं। एक और धर्मिक जड़ व्यवस्था हमें हिंसक बनाती है, वही केवल टेक्नोलॉजी हमें संवेदनशील बना रही है।"

निराला ने भगवान बुद्ध को याद करते हुए करूणा को मानवता का आधर बनाया। बुद्ध को याद करते हुए निराला आज की प्रगति और विकास को जड़ मानते है। आज सभ्यता के वैज्ञानिक-जड़ विकास पर दो सर्वविदित है कि सभ्यता विकास भावनाओं में होता है। संस्कारों से होता है, संस्कृति से होता है किंतु आज जो विकास हैं, उसका मापदंड विज्ञान बन गया है। इस मापदंड को जड़ मानते हुए निराला कहते हैं - आज सभ्यता के वैज्ञानिक जड़ विकास पर गर्वित विश्व नष्ट होने की ओर अग्रसर है। आज विश्व अपने विकास को लेकर काफी गर्वित है। उसे अपने विकास पर बहुत ज्यादा गर्व है। निराला के अनुसार यह विनाश की ओर प्रमाण है। अर्थात् वैज्ञानिक यह विकास न हो कर विनाश हो

सूर्यकांत त्रिपाठी "निराला"

टिप्पणी

स्पष्ट दिख रहा है सुख के लिए खिलौना जैसे बने हुए वैज्ञानिक साधन है। ये वैज्ञानिक साधन मात्र खिलौने हैं, ये जीवन को योग विलास की ओर ले जाने वाले ही पर आज मानव के लक्ष्य हो गए है। आज मानव की भाग दौड़ केवल संपत्ति अर्जित करने पर है। किस प्रकार धन को अर्जित किया जाए। आज यही लक्ष्य रह गया है मानव का।

जल, अम्बर, भूमि सब आज वैज्ञानिक विकास के कारण खतरे में आ गए है। विकास के नाम पर विज्ञान के द्वारा मनुष्य में अपने विनाश की राह को प्रशस्त कर दिया है। विभिन्न प्रकार के परमाणु हथियार विनाश की ओर ही ले जा रहे हैं। रेल, कार, बिजली, जहाज, नौयान अर्थात आवागमन के साधन, संचार के साधन, इनका विकास बहुत तेजी से हुआ है, और इसकी वजह से विश्व पूरे गांव में सिमट गया है। ग्लोबलाइजेशन की भावना पुष्ट हुई है, किंतु इसके साथ-साथ विनाश की लीला भी चल रही है। आपस में राष्ट्र युद्ध कर रहे हैं। युद्धों का स्वरूप अब बदल गया है। अब सैनिक एक दूसरे से लड़ाई नहीं करते है, अब लड़ाई के तरीके बदल गए हैं।

भिड़े राष्ट्र से राष्ट्र। मानव अब हर जगह पर हरेक से स्वार्थ ही देखता है। एक राष्ट्र, दूसरे राष्ट्र से अपने स्वार्थ की सिद्धि के लिए विनाश का तांडव कर रहा है। विनाश की लीला रच रहा है। हंसर्त है जड़वाद ग्रस्त, यो परस्पर विकृत नयनमुख, कहते हुए अतीत भयंकर। जैसे जड़ से ग्रस्त मानवता का अर्थ हो चेतना। यदि चेतना नहीं है, मनुष्य अगर सचेतन नहीं है, तो वह जड़ है, इसमें और अमानव एवं दानव में कोई फर्क नहीं है।

हंसर्त है जड़वाद ग्रस्त यो परस्पर, विकृत नयनमुख , अतीत भयंकर। हां मानव के लिए पतित विश्वमन। अब निराला कविता को भगवान बुद्ध के युग में लेकर जाते है। भगवान बुद्ध के जन्म से पहले या उनके समय में जो परिस्थितियां हो गयी थीं, या जो स्थितियां बन गयी थी, जो मानवता को डस रही थीं, समाप्त कर रही थी, उसके लिए कहते है- हंसर्त है जड़वाद, प्रेत वे परस्पर विकृत नयनमुख करते हुए अतीत भयंकर, हां मानव के लिए पतित था, यह अंशुमन अपितु अशिक्षित वन्य हमारे रहे बंधुगन नहीं वहां तक नहीं आज का मुक्त प्राणी । वहां बिना कुछ कहे सत्य वाणी के मंदिर। जब परिस्थितियां बिल्कुल मानवता के विपरीत हो रही थी, तब शांति व मान्य मौन धरण करते हए भगवान बद्ध सत्यवाणी के मंदिर में प्रवेश करते हैं। भगवान बुद्ध को मानव मन में उतरते हुए अपनी करूणा का प्रसार करते हुए वे कहते हैं- जैसे जीवन में निषिद्ध विभक्त भागो से दूर राजकुंवर त्यागकर स्थिति तो भी यह, भगवान बुद्ध ने उसे त्याग दिया था। एकमात्र सत्य के लिए, सत्य की खोज के लिए, रूढ़ि से विमुख रहा। सत्य भारत में पहले से भी उपलब्ध था, लेकिन उस पर रूढ़ियों के आवरण आ गए थे। बुद्ध ने उन्हें सत्य की खोज की। कठिन तपस्या से लक्ष्य को प्राप्त किया।

भगवान बुद्ध के निर्वाण के बाद संसार को त्यागा नहीं, बल्कि उसे ज्योति का प्रचार प्रसार मानव मात्र में करते रहे। वे स्वयं और उनके शिष्य घुम-घुमकर दूर दराज के गांव में, दूसरे देशों में, क्षेत्रों में, पैदल यात्रा करतेम हुए करूणा, तथा मानवता का प्रसार करते रहे। धीरे-धीरे हुए विरोधी भाव तिरोहित भिन्न रूप से, भिन्न-भिन्न धर्मों में संचित हुए भाव, मानव न रहे करूणा से वंचित।

बद ने और उनके शिष्यों ने धर्म में स्थित बरे भावों को दर किया, और सभी मानव तक करूणा का संदेश पहुंचाया। मानव जल के स्रोत फूट पड़े। पृथ्वी के सभी भागों में भगवान बुद्ध ने शिष्य, जो छल व्याप्त था, जो बल के माध्यम से मनुष्य एक दूसरे को दबा रहा था, ऐसे कीचड़ भरे भाव, गंदे भाव दूर हुए और हुई तुमसे ज्योति प्रदर्शित। भगवान बुद्ध से करूणा की ज्योति पूरे विश्व में आलोकित हुई। निराला इस कविता के माध्यम से उन्हीं भावों का प्रचार-प्रसार इस धरती पर करना चाहते है। आज परिस्थितियां भगवान बद्ध के यग से बहत ज्यादा परिवर्तित हो चुकी है। स्वार्थ से ऊपर मनुष्य की दृष्टि

नहीं उठती है। राष्ट्र भी छोटे राष्टों को दबाकर अपना हित साध रहे है। ऐसे में भगवान बुद्ध की पुन: आवश्यकता संपूर्ण विश्व को है।

4.6 अभ्यास प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. निराला जी की किस कविता ने हिन्दी काव्य-जगत में नवीन क्रांति उत्पन्न कर दी?
2. साहित्य जगत में निराला को किस उपाधि से सम्मानित किया जाता है?
3. निराला की काव्य संवेदना के मुख्य आयाम क्या हैं?
4. निराला का हिन्दी साहित्य में स्थान निर्धरित कीजिए?
5. निराला के काव्य में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय चेतना पर आठ पंक्तियाँ लिखिए?

विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. 'निरालाजी के व्यक्तित्व का निरालापन उनकी काव्य-रचनाओं में पूर्णत: चरितार्थ होता है।' इस कथन की विवेचना कीजिए।
2. निराला जी का जीवन परिचय देते हुए उनकी प्रमुख काव्यकृतियों पर प्रकाश डालिए।
3. निराला की काव्यभाषा में शब्दावली का क्या स्वरूप है, विस्तारपूर्वक लिखिए।
4. भगवान बुद्ध के प्रति कविता का भावार्थ लिखें।
5. भगवान बुद्ध के प्रति कविता के माध्यम से निराला विश्व को क्या संदेश देना चाहते

♦♦♦♦♦

इकाई 5

जागो फिर एक बार 'जयशंकर प्रसाद'

पाठ-संरचना

5.1 उद्देश्य
5.2 प्रस्तावना
5.3 जागरण का स्वर
5.4 संध्या-सुंदरी
5.5 मातृ-वंदना
5.6 भिक्षुक
5.7 जीवन परिचय
5.8 रचनाएँ और रचना संसार
5.9 रचनाएँ
5.10 नाटक
5.11 खोलो द्वार
5.12 किरण
5.13 आँसू
5.14 आशा सर्ग (कामायनी)
5.15 अभ्यास प्रश्न

टिप्पणी

5.1 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप

- निराला साहित्य की पृष्ठभूमि का परिचय दे सकेंगे।
- निराला के काव्य की अंतर्वस्तु का उल्लेख कर सकेंगे।
- निराला की कविता में राष्ट्रीयता और नवजागरण के तत्वों को पहचान सकेंगे।
- निराला के गद्य में नवजागरण के तत्वों का परिचय दे सकेंगे।

5.2 प्रस्तावना

नवजागरण और राष्ट्रीयता के परिप्रेक्ष्य में हिंदी साहित्य का अध्ययन करते हुए इस खण्ड की पिछली दो इकाइयों में आप प्रेमचंद्र और जयशंकर प्रसाद के साहित्य के विषय में पढ़ चुके हैं। आप जान चुके है कि कैसे प्रेमचंद ने अपने उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से भारतीय समाज की ज्वलंत समस्याओं को उठाया और उनके कारणों को तलाशा और समाध न की ओर पाठक को उन्मुख किया। जयशंकर प्रसाद ने अपने काव्य और गद्य के माध्यम से किस तरह राष्ट्रीय स्वाधीनता संग्राम और नवजागरण की चेतना को वाणी दी आप यह जानकारी भी हासिल कर चुके हैं। आपने पढ़ा है कि किस तरह यह चेतना प्रसाद की कविता से अधिक उनके गद्य में विशेषकर नाटकों में मुखर हुई हैं।

प्रस्तुत इकाई में आप निराला के साहित्य में विद्यमान राष्ट्रीयता ओर नवजागरण की चेतना के विषय में पढेंगे। निराला प्रमुख रूप से कवि हैं यद्यपि उन्होंने बहुत सा गद्य भी लिखा है लेकिन प्रमुख पहचान कवि के रूप में है। प्रस्तुत इकाई भी उनके रचनाकार व्यक्तित्व के अनुकूल विशेष रूप से कविता पर और गौण रूप से गद्य पर केन्द्रित है।

5.3 जागरण का स्वर

नवजागरण युग की प्रमुख पुकार बंधनों के प्रति जागरूक होने ओर उनेक तोड़ने के लिए प्रयत्नशील होने की है। वस्तुत: यह राष्ट्रीय उद्‌बोधन का युग है। जिसमें दासता और अन्याय को समाप्त करके मुक्ति पाने की इच्छा जगाई गई है। निराला की कविताओं में जागरण का स्वर जगह-जगह दिखाई देता है। "जागो फिर एक बार" नामक उनकी प्रसिद्ध कविता में प्रकृति के माध्यम से और ऐतिहासिक सांस्कृतिक प्रतीकों के माध्यम से जनमानस को जगाने, उसमें आत्मविश्वास का संचार करने का प्रयास है। बंधनों को झटक कर तोड़ने के लिए सक्रिय होने की प्रेरणा है। एक और तो कवि प्रभात बेला के माध्यम से जागरण का आवाहन करता है।

जागो फिर एक बार!
प्यारे जगाते हुए हारे सब तारे तुम्हें
अरूण पंख तरूण किरण
खड़ी खोलती है द्वार-
उगे अरूणाचल में रवि
आयी भारती-रति कवि कंठ में
क्षण-क्षण में परिवर्तित

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

होते रहे प्रकृति पर गया दिन,
आयी रात गयी रात, खुला दिन
ऐसे ही वीते दिन,
पक्ष, मास वर्ष कितने हजार
जागो फिर एक बार!

हजारों वर्षों से आलस्य निद्रा में सोए जनमानस को जगाते हुए कवि अगली कविता में परंपरा और इतिहास के उदाहरण से प्रेरणा लेने का संदेश देता है। दूसरी और न्याय और मुक्ति के लिए गुरू गोविन्द सिंह के रण संग्राम का ध्यान दिलाता है और कहता है कि आज भी वैसी ही स्थिति है, अन्याय है, अत्याचार है, दमन है। इस देश के निवासी वीर है। लेकिन दीनता और कायरता के पीड़ित हैं। उन्हें अपनी शक्ति का बोध नहीं इसलिए शेरों की माँद पर स्यार का शासन है। देशवासियों को शक्ति का बोध कराते हुए कवि कहता है:

शेरों की माँद में
आया है आज स्यार
जागो फिर एक बार
जागो फिर एक बार
पशु नहीं वीर तुम,
समर शूर क्रूर नहीं
काल चक्र में हो दबे
आज तुम राजकुँवर! समर-सरताज!
"तुम हो महान, तुम सदा हो महान
है नश्वर यह दीन भाव
कायरता, कामपरता
ब्रह्म हो तुम पर-राज-भर भी है
नहीं पूरा यह विश्वभार-"
जागो फिर एक बार!

सोयी हुई जनशक्ति को जगाना, उसे आत्मबोध प्रदान कराना कवि अपना अनिवार्य दायित्व समझता है। वह भारतीय जन को ध्यान दिलाता है तुम्हारी दीन-हीन पीड़ित दशा के लिए तुम स्वयं जिम्मेदार हो। शासक तुम्हारे प्रति जो पाशविक व्यवहार कर रहा है तुम उसके योग्य नहीं हो लेकिन अपने आलस्य और कायरता के कारण तुम्हारी आत्मशक्ति और शारीरिक बल दोनों ही सुप्त प्राय हो गए हैं परिणामस्वरूप सांस्कृतिक कीर्ति के चरम शिखर पर रहने वाले देश में अज्ञान और निराशा का अंध कार है। अपनी श्रेष्ठता को पहचानते हुए जागो और अपने शौर्य और शक्ति को सिद्ध करो। एक अन्य कविता में निराला दैन्य का चित्रण करते हुए परंपरा में मौजूद ज्ञान से उसके समाधन का संदेश देते हैं:

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

उठा आज कोलाहल

गया लुट सकल संबल

शक्तिहीन तन निश्चल

रहित रक्त से रग-रग

मिला ज्ञान से जो धन नहीं हुआ

निश्चेतन बाँधे उससे जीवन

साधे पग-पग यह डग

जागरण की शक्ति में कवि आस्था ही नहीं उसे पूर्ण विश्वास है कि ज्ञान का प्रकाश दैन्य को धेकर विजय की दिशा में अग्रसर करता है:

जगा दिशा ज्ञान,

उगा रवि पूर्ण का गगन में, नव यान !

हारे हुल सकल दैन्य दलमल चले-,

जीते हुए लगे जीते हुए गले

बंद वह विश्व में गूंजा विजय गान।

5.3.1 ऐतिहासिक-सांस्कृति कथ्यों और पात्रों द्वारा जागरण चेतना का प्रसार

राष्ट्रीय जागरण की भावना को जगाने में इतिहास और संस्कृति का अवगाहन अत्यंत प्रबल और सशक्त माध्यम होता है। इतिहास के बहाने रचनाकार वर्तमान को जीवंत बनाता है और उसकी समस्याओं से जूझने का मार्ग प्रशस्त करता है। निराला की प्रतिनिधि रचनाएँ "राम की शक्ति पूजा" और "तुलसीदास" इस क्षेत्र की महत्तर उपलब्धि हैं। पदाक्रांत भारतीय समाज की मुक्ति भारतीय परंपरा के लोकनायक राम और लोक समन्वयकारी कवि तुलसीदास दोनों से कैसे संभव है इस समस्या से कवि इन कविताओं में जूझा है। राम की शक्तिपूजा में अन्यायी, अत्याचारी रावण को पराजित करने में राम सफल नहीं हो पा रहे क्योंकि अत्याचारी की शक्ति प्रबल है। उसे काबू कर पाना आसान नहीं। इस विवश स्थिति में बूढ़ा मंत्री जाम्बवान राम को सलाह देता है कि

"शक्ति की करो मौलिक कल्पना

करो मौलिक पूजन"

राम शक्ति की अपने ढंग से साधना करतें और अंत उन्हें शक्ति सिद्ध हो जाती है।

होगी जय होगी जय है पुरुषोत्तम नवीन

वह महाशक्ति राम वदन में हुई लीन

राम कथा का यह प्रसंग समसामयिक अर्थ संदर्भो को अपने ढंग से प्रस्तुत करता है। पराजित देश के लिए शक्ति की मौलिक कल्पना से अधिक महत्वपूर्ण कौन सा परामर्श हो सकता है। शक्ति अनुकरण से नहीं आ सकती उसकी तो मौलिक ढंग से ही अपनी परिस्थितियों के अनुकूल अर्जित करना पड़ता है। राजनीतिक आर्थिक पटल पर "स्वदेशी आंदोलन" वस्तुत: शक्ति की मौलिक कल्पना का ही व्यावहारिक रूप है।

कविता के अंत में होगी जय होगी जय कहते हुए शक्ति का राम के मुख में लीन हो जाना आत्मशक्ति के विकास को ही प्रस्तुत करता है जो ब्रिटिश साम्राज्यवाद को उलटने की भारतीय जनशक्ति का सूक है।

टिप्पणी

"तुलसीदास" कविता में निराला भारत की सांस्कृतिक पराधीनता के अंधकार को प्रस्तुत करते हैं और प्रश्न उठाते है कि पश्चिमी संस्कृति से भारतीय संस्कृति की टकराहट है अथवा हम उनकी सांस्कृतिक दासता स्वीकार किए हैं।

मध्यकालीन परिदृश्य में समूची सांस्कृतिक निश्चेष्टत के बीच सांस्कृतिक अस्मिता का प्रश्न तुलसीदास के सामने उठता है। अपनी पत्नी रत्नावली की धिक्कार सुनते ही उन्हें रत्नावली

में माँ शारदा का साक्षात्कार होता है। यहीं से उनके मन में सांस्कृतिक संघर्ष की कथावस्तु घूमने लगती है जो "रामचरितमानस" का आधर बनती है। तुलसी के पारिवारिक जीवन के बारे में प्रचलित लोककथा को इस कविता में कवि बृहत्तर उद्देश्य प्रदान करता है:

जागा, जागा संस्कार प्रबल,
रे गया काम तत्क्षण वह जल
देखा, शारदा नील-वसना
हैं सम्मुख स्वयं सृष्टि रशना
जीवन-समीर-शुचि-नि:श्वसना, वरदात्री,
जिस कलिका में कवि रहा बन्द
वह आज उसी में खुली मंद
भारती-रूप में सुरभि-छंद निष्प्रश्रय

"महाराजा शिवाजी का पत्र" (मिर्जा राजा जय सिंह के नाम) नामक लंबी कविता भी इसी तरह अतीत के माध्यम से वर्तमान के प्रश्न को उठाती है और मिर्जा राजा जय सिंह को औरंगजेब की ओर से लड़ने के लिए धिक्कारती है।

उठती जब नग्न तलवार है
स्वतंत्रता की कितने ही भावों से
याद दिला घोर दुख दारूण परतंत्रता का,
फंकती स्वतंत्रता निज मंत्र से
जब व्याकुल कान
कौन वह सुमेरू
रेणु-रेणु जो न हो जाए?

5.3.2 काव्यानुभूति में विद्रोह की भावभूमि

नवजागरण का सर्वाधिक तेजोद्दीप्त रूप में निराला की काव्यानुभूति की विद्रोही भावभूमि में दिखाई देता है। राजनीतिक सांस्कृतिक पराधीनता से मुक्ति के स्वर की चर्चा तो पीछे की जा चुकी है। उसके साथ-साथ जीवन के हर क्षेत्र में शोषण और परंपरागलित मान्यताओं से मुक्ति निराला की कविता का प्रमुख स्वर है। उनकी "बादलराग" कविता कृषक की वेदना को सहानुभूति प्रदान करते हुए विप्लव के बादल का आह्वान करती है। विप्लव के बादल को देख अट्टालिकाओं में सुख सेज पर सोया धनाढ्य वर्ग भयभीत हो जाता है लेकिन जीर्ण-शीर्ण शरीर लिए कृषक उसको स्वागत करता है:

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

विप्लव रव से छोटे ही हैं शोभा पाते
अट्टालिका नहीं रे
आतंक-भवन सदा पंक पर ही होता
जल विप्लव प्लावन
धनी, वज्र गर्जन से बादल!
त्रस्त नयन मुख ढाँप रहे हैं।
जीर्ण बाहु, है शीर्ण शरीर,
तुझे बुलाता कृषक अधीर,
ऐ, विप्लव के वीर!

इसी प्रकार 'वह तोड़ती पत्थर' 'भिक्षुक' 'विधवा' 'दीन' आदि जैसी कविताएँ गरीबी और शोषण की मार से पीड़ित जन की वेदना को वाणी देती हैं। कवि यहाँ एक ओर सामाजिक स्थितियों पर दूसरी ओर विधता के विधन पर प्रश्न चिन्ह लगाता है और उस सोच का बहिष्कार करता है जो गरीबी और दैन्य की ईश्वरीय विधन मान कर स्वीकार कर लेने की सलाह देता है। उदाहरण के लिए कुछ पंक्तियाँ हैं:

1. पेट-पीठ दोनों मिलकर हैं एक,
   चल रहा लकुटिया टेक
   भूख से सूख ओंठ जव जाते
   दाता-भाग्य विधता से क्या पाते?
   घुट आँसूओं के पीकर रह जाते - **"भिक्षुक"**
2. सह जाते हो उत्पीड़न की क्रीड़ा सदा निरंकुश नग्न,
   हृदय तुम्हारा दुर्बल होता भग्न
   उत्पीड़न का राज्य दुख ही दुख यहाँ है सदा उठाना,
   क्रूर यहाँ पर कहलाता है शूर
   और हृदय का शूर सदा ही दुर्बल क्रूर; - **'दीन'**

निराला की प्रसिद्ध विद्रोही - 'कविता कुकुरमत्ता में शोषित' जन की पीड़ा दैन्य नहीं रहती बल्कि पूँजीपति के विरोध में आवाज उठाती है। कुकुरमुत्ता को कवि ने शोषित जन का प्रतीक माना है और गुलाब को पूँजीपति का; गुलाब लगाने में बहुत परिश्रम व साधन लगाने पड़ते हैं जबकि कुकुरमुत्ता स्वयं ही लगता है। बगीचे में खड़े गुलाब से एक दिन कुकुरमुत्ता कह उठता है:

"अबे, सुन वे, गुलाब,
भूल मत जो पायी खुशबू, रंगो आब,
खून चूसा खाद का तूने अशिष्ट
डाल कर इतरा रहा है कैपीटलिस्ट!
कितनों को तूने बनाया गुलाम,

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

माली कर रखा, सहाया जाड़ा घाम,
शाहों, राजों, अमीरों का रहा प्यारा
तभी साधरणों से तू रहा न्यारा।
रोज पड़ता रहा पानी
तू तू हरामी खानदानी
और अपने से उगा मैं
बिना दाने का चुगा मैं

यहाँ साधरण सा पौध कुकुरमुत्ता अपना महत्व पहचानते हुए गुलाब को आड़े हाथों लेता है। वास्तव में साधरण जन का विशिष्टों के विरुद्ध आवाज उठाने का भाव इन दोनों प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त हुआ है। आर्थिक सामाजिक क्रांति लाने की बैचेनी उनकी एक और कविता जल्द-जल्द पैर बढ़ाओ, आओ आओष मैं बहुत तीव्रता में व्यक्त हुई है।

जल्द-जल्द पैर बढ़ाओ, आओ आओ।
आज अमीरों की हवेली
किसानों की होगी पाठशाला
धेबी, पासी, चमार, तेली
खोलेंगे अँधेरे का ताला
एक पाठ पढ़ेंगे, टाट बिछाओ

मनुष्य के महत्व में आस्था

नवजागरण काल में समाज के विभिन्न वर्गों के बीच ही नहीं मनुष्य और ईश्वर के बीच संबंध में भी बदलाव आया था। मध्यकालीन कविता के केंद्र में ईश्वर था। संत कवि संसार को नि:सार मानते हुए ईश्वर प्राप्ति को ध्येय बनाते थे। इसके विपरीत आधुनिक युग में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का प्रसार हुआ और मनुष्य तथा संसार की महत्व प्रतिष्ठा हुई। नवजागरण की इस दृष्टि ने साहित्य के केंद्र में मनुष्य को रखा। मानवीय गौरव को स्थापित करते हुए संसार को भी स्वीकार योग्य, सुधर योग्य माना गया। यही भावबोध निराला की कविता में विभिन्न स्तरों पर व्यक्त हुआ है। 'राम की शक्ति पूजा' के राम पौराणिक पात्र होते हुए भी आधुनिक मनुष्य है। रावण पर विजयी न हो पाने का उन्हें संशय है। विषम स्थिति में वह त्रस्त होते है उनकी आँखों से आँसू गिरते हैं:

स्थिर राघवेंद्र को हिला रहा फिर-फिर संशय,
रह-रह उठता जग जीवन में रावण-जय-भय
बोले रघुमणि "मित्रवर विजय होगी न समर
यह नहीं रहा नर-वानर को राक्षस से रण
उतरी" महाशक्ति रावण से आमंत्रण
अन्याय जिधर है उधर शक्ति पा कहते छल-छल
हो गए नयन, कुछ बूंद पुन: ढलके हग जल।

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

राम की हताश स्थिति और रावण को प्राप्त महाशक्ति के सम्मुख विवशता से उनका रो पड़ना सामान्य मनुष्य का सा आचरण है इस हताश स्थिति में जाम्बवान का राम की परामर्श

हे पुरूष सिंह तुम भी यह शक्ति को करो धरण
रावण अशुद्ध हो कर भी यदि कर सका त्रस्त
तो निश्चय तुम हो सिद्ध करोगे उसे ध्वस्त

साधरण मनुष्य की संपूर्ण शक्ति एकत्र करने की क्षमता और उसके उपयोग में विश्वास और को आस्था प्रकट करता है। मनुष्यत्व की ईश्वरत्व के ऊपर यह स्थापना नवजागरण की कविता का प्रमुख उपजीव्य है।

5.4 संध्या-सुंदरी

दिवसावसान का समय
मेघमय आसमान से उतर रही है
वह संध्या-सुन्दरी, परी सी,
धीरे, धीरे, धीरे
तिमिरांचल में चंचलता का नहीं कहीं आभास,
मधुर-मधुर हैं दोनों उसके उधर,
किंतु गंभीर, नहीं है उसमें हास-विलास।
हँसता है तो केवल तारा एक
गुंथा हुआ उन घुघराले काले-काले बालों से,
हृदय राज्य की रानी का वह करता है अभिषेक।
अलसता की-सी लता,
किंतु कोमलता की वह कली,
सखी-नीरवता के कंधे पर डाले बाँह,
छाँह सी अम्बर-पथ से चली।
नहीं बजती उसके हाथ में कोई वीणा,
नहीं होता कोई अनुराग-राग-आलाप,
नूपुरों में भी रुन-झुन रुन-झुन नहीं,
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द-सा 'चुप चुप चुप'
है गूंज रहा सब कहीं
व्योम मंडल में, जगतीतल में
सोती शान्त सरोवर पर उस अमल कमलिनी-दल में
सौंदर्य-गर्विता-सरिता के अति विस्तृत वक्षस्थल में

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

धीर-वीर गंभीर शिखर पर हिमगिरि-अटल-अचल में
उताल तरंगाघात-प्रलय घनगर्जन-जलधि-प्रबल में
क्षिति में, जल में नभ में, अनिल-अनल में
सिर्फ एक अव्यक्त शब्द-सा 'चुप चुप चुप' है
गूंज रहा सब कहीं
और क्या है? कुछ नहीं।
मदिरा की वह नदी बहाती आती,
थके हुए जीवों को वह सस्नेह,
प्याला एक पिलाती।
सुलाती उन्हें अंक पर अपने,
दिखलाती फिर विस्मृति के वह अगणित मीठे सपने।
अर्द्धरात्रि की निश्चलता में हो जाती जब लीन,
कवि का बढ़ जाता अनुराग
विरहाकुल कमनीय कंठ से,
आप निकल पड़ता तब एक विहाग।

संध्या-सुन्दरी :

यह कविता निराला द्वारा रचित 'परिमल' काव्य-संग्रह से ली गयी है। इस कविता का भाव एवं शिल्प पूर्णत: छायावादी है। प्रकृति पर मानवी चेतना का आरोप करते हुए संध्या को एक सुन्दरी के रूप में प्रस्तुत किया गया है जो दिवस के अवसान पर आसमान से धीरे-धीरे पृथ्वी पर उतरती है। सर्वत्र नीरवता छाई हुई है। यह नीरवता संध्या सुन्दरी की सखी है। कवि ने 'संध्या सुन्दरी' को नायिका के रूप में पृथ्वी पर उतारा है। निराला जी कहते हैं कि दिन समाप्त हो रहा है। चारों ओर संध्याकाल का झुट पुट अन्धेरा घिरता आ रहा है जिसे देखकर ऐसा प्रतीत होता है मानो वह संध्या रूपी सुन्दरी एक अप्सरा की तरह बादलों से घिरे आकाश से धीरे-धीरे पृथ्वी पर उतर रही है। कहने का आशय यह है कि संध्या अचानक नहीं आ जाती बल्कि धीरे-धीरे घिरती आती है।

अन्धकार ही इस संध्या सुन्दरी का आँचल है जिसे उसने अपने वक्ष पर डाल रखा है। परिणामत: आँचल हवा में उड़ नहीं रहा है। क्योंकि, इस समय वायु का संचरण नहीं हो रहा है। इस संध्या सुन्दरी के दोनों अधर अत्यन्त सुन्दर हैं किन्तु वह इस समय गंभीर दिखायी दे रहे हैं। इन अधरों पर किंचित मात्र भी हास नहीं है। आकाश में एक तारा चमक रहा है जो ऐसा लगता है मानो इस सुन्दरी के घुघराले, काले केशों में टंका हुआ कोई पुष्प हो। वह तारा अपने हृदय राज्य की रानी संध्या का अभिषेक (अभिनन्दन) करता हुआ प्रतीत होता है।

आसमान से उतर रही संध्या सुन्दरी पूरी तरह शान्त है। चारों ओर शान्त वातावरण है कहीं कोई शब्द नहीं गूंज रहा है। संध्या समय छायी हुई नीरवता का वर्णन करते हुए कवि कहता है कि वह संध्या सुन्दरी आलस्य की लता जैसी प्रतीत हो रही है क्योंकि उसकी चाल बहुत धीमी है। वह मन्दगति से पृथ्वी पर उतर रही है। कोमलता की कली नीरवता को देखकर ऐसा लगता है जैसे नीरवता (शान्ति)

टिप्पणी

इस संध्या सुन्दरी की सबसे प्रिय सहेली है, जिसके कन्धे पर अपनी बाँ रखकर यह छाया के समान आसमान से पृथ्वी पर उतरती आ रही है।

इस संध्या सुन्दरी के हाथों में न तो वीणा बज रही है और नहीं यह प्रेम-गीत का आलाप गुन-गुना रही है। इसके नूपुर भी शान्त है उनमें से कोई रूनझुन आवाज भी नहीं आ रही है। सर्वत्र एक अव्यक्त शब्द 'चुप-चुप' गूंज रहा है मानो हर कोई एक दूसरे को मौन रहने का संकेत कर रहा हो। कहीं कोई आवाज तनिक भी सुनाई नहीं पड़ रही। ऐसा लगता है कि यह 'चुप' शब्द आकाश से लेकर पृथ्वी तक फैला हुआ है। शान्त सरोवर में खिले हुए कमलों के समूह भी शान्त है। अपने सौंदर्य पर झठलाने वाली नदी भी शान्त है और मौन का यह स्वर धीर गम्भीर हिमालय की अटल चोटियों में भी गूंज रहा है। जो सागर ऊँची लहरों वाला है और हमेशा अशान्त रहता है, वह भी संध्या समय शान्त हो गया है। पृथ्वी, जल, आकाश, अग्नि और वायु से युक्त इस संसार में सर्वत्र यही 'चुप' अव्यक्त भाव से गूंज रहा है मानो इसके अलावा कहीं कुछ नहीं है।

सर्वत्र छायी नीरवता को देखकर ऐसा लगता है मानो श्संध्या सुन्दरीश ने सबको नशे में उन्मत्त कर दिया है अर्थात् दिन भर के कामकाज से थके प्राणियों को वह इस सुषमा रूपी मदिरा का एक प्याला सस्नेह पिलाकर, उनकी थकान को दूर कर देती है। कहने का आशय यह है कि थके हए प्राणी संध्याकालीन सुन्दरता को देखकर अपनी थकान भूल जाते है।

यह सुन्दर संध्या उन्हें अपनी गोद में सुलाकर विश्राम देती है और नींद में उन्हें मधुर सपनों में खो जाने देती है। आधी रात के समय जब सब कुछ शान्त हो जाता है तब कवि के हृदय में प्रेम की भावना और अधिक बढ़ जाती है और उसके विरह विकल कण्ठ से स्वत: ही 'विहाग' राग फूट पड़ता है।

संध्या - सुन्दरी प्रकृतिपरक कविता है। निराला एक छायावादी कवि थे उन्होंने मानव, प्रकृति एवं भाव तीनों के सौन्दर्य की अभिव्यक्ति इस कविता में की है।

साहित्यिक सौंदर्य

1. संध्या का मानवीकरण कर प्रकृति पर चेतनता का आरोप छायावादी काव्य की प्रमुख विशेषता है।
2. 'संध्या सुन्दरी' में रूपक अलंकार है।
3. संध्याकाल में व्याप्त नीरवता के प्रभाव को व्यक्त करने में 'चुप-चुप-चुप' का प्रयोग - कवि की कुशलता का प्रतीक है।
4. 'मदिरा की वह नदी बहाती आती' में लक्षणा शब्द शक्ति है।
5. छायावादी भाव एवं शिल्प इस कविता में विद्यमान है।

5.5 मातृ-वंदना

नर जीवन के स्वार्थ सकल,

बलि हों तेरे चरणों पर, माँ,

मेरे श्रम-संचित सब फल।

जीवन के रथ पर चढ़कर,

सदा मृत्यु-पथ पर बढ़कर,

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

महाकाल के खरतर शर
सह सकूँ, मुझे तू कर दृढ़तर।
जागे मेरे उर में तेरी,
मूर्ति अश्रु जल-धैत विमल।
दृग जल से पा बल, बलि कर दूँ।
जननि, जन्म-श्रम-संचित सब फल।
बाधएँ, आएँ तन पर,
देखू तुझे नयन मन भर।
मुझे देख तो सजल दृगों से
अपलक, उर के शतदल पर,
क्लेद युक्त, अपना तन दूंगा,
मुक्त करूँगा तुझे अटल,
तेरे चरणों पर देकर बलि,
सकल श्रेय-श्रम-संचित सब फल।
कविता का केन्द्रीय भाव
"भारत-वंदना" कविता का केन्द्रीय भाव

"मातृ वंदना" कविता हिंदी के महान कवि श्सूर्यकांत त्रिपाठी निराला जीश द्वारा रचित की एक देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत कविता है। निराला जी ने अपनी कविता मातृ वंदना के माध्यम से मातृभूमि भारत के प्रति अपनी श्रद्धा और भक्ति भाव प्रदर्शित किया है। निराला जी ने अपने जीवन में स्वार्थ भाव तथा जीवन भर के परिश्रम से प्राप्त सारे फल मां भारती के चरणों में अर्पित करते हैं।

निराला जी ने इस कविता के माध्यम से हर भारतवासी को अपनी मातृभूमि के प्रति कर्तव्य निभाने के लिए प्रेरित किया है। कवि कहते हैं कि अपनी मातृभूमि को स्वतंत्र करना और उसके सम्मान के लिए अपना सर्वस्तव अर्पण कर देना ही हर देशवासी का कर्तव्य है।

5.6 भिक्षुक

'भिक्षुक' कविता का परिचय : कवि निराला जी की श्भिक्षुकश यह कविता उनके चर्चित काव्य-संग्रह श्परिमलश में संग्रहित है। समाज के पीड़ितों, दु:खी, दीन-दलितों के प्रति निराला जी का हृदय विशेष संवेदनशील था। उसकी ही झलक प्रस्तुत कविता में भी स्पष्टत: दिखाई देती है। इस कविता में कवि ने एक भिखारी और उसके दो बच्चों की दयनीय अवस्था का वर्णन किया है और उनके प्रति सहानुभूति प्रकट की है।

प्रस्तुत कविता में कवि ने भिक्षुक यथार्थ वर्णन किया है। कविता में भिखारी मजबूरन भीख माँगने के लिए विवश है। शारीरिक दुर्बलता एवं दयनीय आर्थिक स्थिति के कारण वह अपना एवं अपने परिवार का पेट भरने में अक्षम है। इसीलिए वह अपनी फटी हई परानी झोली समाज-सम्मुख बार-बार फैलाकर दया की याचना करता रहता है। इस भिखारी से भी बदतर जिंदगी जीने के लिए प्रवृत्त हैं उसके बच्चे,

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

जो अपने दोनों हाथों से भूख एवं भिक्षा की याचना को समाज के सामने बार-बार जाहीर कर रहे हैं। लेकिन बेदर्द एवं जालीम समाज से सब कुछ भी नहीं हासिल होता और भाग्य-विधता से भी वे जब कुछ नहीं पाते तो वे सिर्फ आँसुओं के बूंट पीने के लिए मजबूर हो जाते है। रास्ते पर पड़े जूठे पत्तलों को लेकर भी उन्हें कुत्तों से संघर्ष करना पड़ता है यानी कवि यहाँ दर्शाना चाहते हैं कि उनका जीवन पशुओं से भी बदतर और गया गुजरा है। कवि के संवेदनशील हृदय में उनके प्रति हमदर्दी है। उनके दु:ख-दर्द एवं पीड़ा को अपने अंदर समाने की बात कवि कहते हैं, लेकिन उन्हें भी इसके लिए संघर्षरत रहने की नसिहत कवि देते है। भिक्षुक के प्रति अपार सहानुभूति को कवि ने इस कविता के माध्यम से प्रकट किया है।

'भिक्षुक' कविता का भावार्थ : प्रस्तुत कविता में कवि दीन-हीन भिक्षुक को रास्ते पर आता देखते हैं, जिसकी अवस्था बेहद ही दर्दनाक एवं दयनीय है। संवेदनशील हृदय के कवि उसकी निर्मम व्यथा को चित्रित करते हुए कहते हैं- भिक्षा की याचना करते हुए उस भिखारी के कलेजे के टुकड़े-टुकड़े हो रहे हैं, उसका कलेजा भीख माँगते-माँगते चूर-चूर हो रहा है। वह अपनी इस अवस्था के लिए पछता रहा है, पर भीख माँगने के लिए वह विवश है। उसकी स्थिति इतनी कृश एवं दुर्बल है कि उसका पेट और पीठ दोनों एक ही दिखाई दे रहे हैं। वह लाठी लेकर चल रहा है, जो उसकी शारीरिक दुर्बलता एवं वृद्धावस्था को भी दर्शाता है। वह अपने पेट की भूख मिटाने के लिए सिर्फ मुट्ठी भर दाने की ही याचना करते हुए अपनी फटी हुई पुरानी झोली को बार-बार फैला रहा है। यह उसकी विवशता बनी हुई है, लेकिन ऐसे करते हुए उसके कलेजे के टुकड़े-टुकड़े हो जाते हैं। वह पछताता है, लेकिन फिर भी रस्ते पर भीख माँगने के लिए प्रवृत्त हो जाता है।

उस भिखारी की दयनीयता और अधिक इसलिए भी है कि उसके साथ दो बच्चे भी है, जो सदैव अपने हाथ फैलाए हए है। बाएँ हाथ से वे अपने पेट पर हाथ फेरते रहते है, मानों अपनी भूख का इजहार कर रहे हो और दायाँ हाथ आगे की ओर फैला रहता है, इस आशा में कि किसी की दया का पात्र वे बन जाएँ और कोई उन्हें कुछ खाने के लिए दे दें। किसी की दया-दृष्टि जब उन पर नहीं पड़ती तो उनके ओंठ भूख के कारण सूख जाते हैं और भाग्य-विधता-दाता से वे कुछ भी नहीं पाते, तो वे आँसुओं के चूंट पीकर रह जाते हैं। याने भूख मिटाने के लिए जब ये भिखारी रास्ते पर भीख की याचना करते हैं और कोई भी जब इन पर दया नहीं दिखाता तब भूख के कारण इनकी आँखों से आँसू बहने लगते हैं और भाग्यविधता भगवान से भी जब कुछ हासिल नहीं होता. तब दर्द और निराशा ही उनके हाथ लगती इन भिखारियों की नजर कभी सड़क पर पड़ी हुई जूठी पत्तलों पर पड़ती है, तो भूख के कारण वे उन्हें ही चाटने लगते हैं, किंतु यहाँ भी उनके प्रतिस्पर्धी के रूप में कुत्ते मौजूद होते हैं, जिन्हें लगता है कि उनकी भूख का हिस्सा इन भिखारियों के द्वारा खाया जा रहा है, इसलिए वे भी उनके हाथों से उन जूठी पत्तलों को हासिल करने के लिए अड़े हुए हैं। जीवन की कैसी विडम्बना है कि जो पशुओं के लिए भोग्य वस्तु है, वह भी उनके नसीब में नहीं है या उसके लिए भी उन्हें संघर्ष करना पड़ रहा है। परंतु कवि का हृदय संवेदनशील है मानवीयता से ओत-प्रोत है। उन भिखारियों की स्थिति को देखकर उन्हें उनका हृदय कहता है कि मेरे हृदय में संवेदना का अमृत बह रहा है, मैं उस अमृत से तुम्हें सींचकर तृप्त कर दूंगा। लेकिन तुम्हें चक्रव्यूह भेदने गए अभिमन्यु जैसे जुझारू और संघर्षशील होना होगा, तभी इस संसार के गरीबी और अन्य दुश्चक्ररूपी चक्रव्यूह से तुम मुक्त हो सकोगे। तुम्हारे संपूर्ण दु:ख दर्द को मैं अपने हृदय में समेट लूँगा, तुम्हारे सारे दु:ख दर्द को बाँटकर उन्हें दूर करूँगा। अत: कवि भिक्षुक की दीनता के प्रति अपनी अपार संवेदनशील सहानुभूति को प्रकट करते हैं। समाज के शोषण, अन्याय एवं दमन के खिलाफ ऐसे शोषित, पीड़ित एवं दलिए वर्ग के प्रति कवि की आस्था एवं संवेदनशील को प्रस्तुत कविता बयान करती है।

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

भिक्षुक कविता की विशेषताएं:

1. भिखारियों का बेहद भावुक एवं हृदयस्पर्शी चित्रण प्रस्तुत कविता में किया गया है।
2. कविता में अभिव्यक्त भिखारियों के माध्यम से समाज में व्याप्त निम्नतम आम आदमी की वास्तव समस्या को अधेरेखित किया गया है।
3. भिखारियों की कटु सच्चाई को समाज-सम्मुख रखा गया है।
4. भिखारी-वर्ग की लाचारी, दयनीयता, उसकी भूख, तड़प एवं संघर्ष को यह कविता अभिव्यक्त करती है।
5. अपाहिज, हीन-दीन भिखारियों की सच्चाई को यथार्थता से सामने रखते हुए समाज की आँखे खोलने हेतु ऐसे दीन-हीन अभिशप्त लोगों की मदत के लिए प्रोत्साहित किया गया है।
6. भिखारियों को भी संघर्षरत रहने के लिए प्रेरित कर मानवता की संवेदना को जागृत रखते हुए उनके प्रति अपार सहानुभूति रखने का महत्वपूर्ण संदेश इस कविता से मिलता है।

5.7 जीवन परिचय

महाकवि जयशंकर प्रसाद हिन्दी जगत के लिए प्रसाद स्वरूप हैं। प्रसाद जी प्रथम श्रेणी के कवि, श्रेष्ठ नाटककार, कुशल कहानीकार, उपन्यासकार तथा उच्च कोटि के निबन्धकार हैं। वस्तुत: नवीन युग का द्वार प्रसाद जी ने ही खोला। आज अनेक विद्वान एक स्वर में उन्हें छायावाद का प्रवर्तक और इसका श्रेष्ठ कवि मानते हैं। निश्चय ही ये युग प्रवर्तक साहित्य-सृष्टा थे। इतिहास दर्शन और कला के मणि कांचन संयोग ने उनके काव्य को अपूर्व गरिमा प्रदान की

जयशंकर प्रसाद का जन्म काशी के एक समद्ध एवं सम्पन्न वैश्य परिवार में सन 1889 ई. को हुआ था। इनके पूर्वज 'सुंघनी साहू' के नाम से विख्यात शिव के अनन्य भक्त थे। शिवरत्न साह उनके पितामह थे और वे अत्यन्त दयाल तथा दानी व्यक्ति थे। तम्बाक और सरती के इस प्रख्यात व्यापारी परिवार में अत्यन्त व्यवहारकुशल तथा उदार हृदय व्यक्ति देवी प्रसाद ही इनके पिता थे। इनके पिता साहित्य प्रेमी और साहित्यकारों का सम्मान करने वाले थे। घर इस वातावरण का बालक जयशंकर पर अच्छा प्रभाव पडा। प्रसाद जी का बचपन सख के साथ व्यतीत हुआ। उन्होंने अपने माता-पिता के साथ देश के विभिन्न तीर्थ स्थानों की यात्र की। परन्तु दुर्भाग्य से प्रसाद जी के बचपन में ही उनके माता-पिता की मृत्यु हो गयी। ऐसी दशा में प्रसाद जी का पालन-पोषण और शिक्षा-दीक्षा का प्रबन्ध इनके बड़े भाई शम्भूरत्न जी ने किया। सर्वप्रथम प्रसाद जी का नाम क्वींस कालेज में लिखवाया गया। परन्तु वहाँ उनका पढ़ाई में मन नहीं लगा, इसलिए उन्होंने घर पर ही अंग्रेजी, संस्कृत तथा फारसी की शिक्षा प्राप्त की। वेद, पुराण, इतिहास और दर्शनशास्त्र का अपने स्वाध्याय से ही उन्होंने सम्यक् ज्ञान प्राप्त कर लिया। दुर्भाग्य से 17 वर्ष की अवस्था में उनके भाई भी इस संसार से चल बसे। प्रसाद जी की दीर्घायु के लिये गोकर्णनाथ महादेव की मनौती मानी गई थी। यही कारण है कि इनका नाम भी भगवान शंकर के प्रसाद स्वरूप 'जयशंकर प्रसाद' रखा गया।

जयशंकर प्रसाद को बचपन से ही कविता लिखने में बहुत रूचि थी। सन् 1908 तक प्रसाद जी द्वारा ब्रजभाषा में रचित कविताएँ तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में छपने लगी थीं। इनकी कई कविताएँ 'इन्दु' पत्रिका में सम्पादित हुई। कविता और कहानी पर प्राप्त पुरस्कारों को इन्होंने कभी स्वीकार नहीं किया। इन्होंने हिन्दुस्तानी अकादमी द्वारा प्रदत्त पुरस्कार वाराणसी की प्रसिद्ध साहित्यिक संस्था 'काशी नगरी प्रचारिणी सभा' को दान कर दिया। ये शैव मत के अनुयायी थे, किन्तु दूसरे धर्मो का आदर करते थे।

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

उनके धर्म ग्रन्थों का अध्ययन करते थे। उनकी पहली कविता नौ वर्ष की अवस्था में ही प्रकाश में आ गई थी। प्रसाद जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। इन्हें हिन्दी का 'रवीन्द्र' कहा जाता है। उन्होंने अपनी पारस लेखनी से साहित्य की जिस विध का भी स्पर्ष किया, उसे कंचन बना दिया।

प्रसाद जी ने 11 वर्ष की बाल्यावस्था में अपनी माता के साथ पुरकाजी, ओंकारेश्वर, जयपुर, उज्जैन, ब्रजमण्डल तथा अयोध्या आदि स्थानों की यात्र की थी। भारत के प्राकृतिक सौन्दर्य एवं सम्पदा के अद्‌भुत दृश्यों का आस्वाद भी उन्होंने लिया था। पर्वतों, झरनों, लहरों और कानन कुसुमों की चाँदनी रातों में विहार भी किया था। जगन्नाथपुरी की यात्र में सागर की विशालता, गंभीरता तथा उत्ताल तरंगों की गर्जना सुनी थी तो माँ के अंचल में विराजमान हिमगिरी के उत्तुग शिखर का आनन्द भी लिया था। इन्हीं सब अद्‌भुत प्रकृति शक्तियों ने कवि हृदय को प्रेरणा की। पारिवारिक बाधओं और विपदाओं से विचलित न होकर अडिग रहने वाले प्रसाद ने जीवन की सभी विषम परिस्थितियों का सामना किया और सदैव आनन्द को जीवन का लक्ष्य माना। उन्होंने इसी दृष्टिकोण को स्वर देते हुए विश्व के महान महाकाव्य 'कामायनी' में लिखा भी है-

जिसे तुम समझे हो अभिशाप,
जगत की ज्वालाओं का मूल,
ईश का वह रहस्य वरदान,
कभी मत इसको जाओ भूल।

संस्कृत और अंग्रेजी के नियमित अध्ययन से उन्हें वेद, उपनिषदों के साथ-साथ पुराण, महाभारत तथा अन्य ऐतिहासिक-सांस्कृतिक महाकाव्यों एवं ग्रन्थों के अध्ययन की प्रेरणा मिली। भारतीय संस्कृति के प्रति यहीं से श्रृद्धा उत्पन्न हुई तो अतीत के प्रति रूचि भी जागृत हुई।

व्यक्ति की दृष्टि से उच्चकोटि के महापुरूषों में गिने जाने वाले महाकवि प्रसाद ने परिवार और व्यापार के कठिन उत्तरदायित्वों को संभालते हुये भी गहन अध्ययन एवं मनन के दढ सम्बल तथा नैसर्गिक प्रतिभा के वरदान से जो कछ भी भारतीय साहित्य को दिया. उस पर हम सभी को गर्व है। हमारा दुर्भाग्य ही है कि 'छोटे से जीवन की कैसे, बड़ी कथाएँ आज कहूँ' कहने वाला बहुमुखी प्रतिभा से सम्पन्न वह महान कलाकार व्यक्तित्व, अधिक दिनों तक हमारा मार्गदर्शन न कर सका। जनवरी सन् 1937 में प्रसाद जी बीमार पड़ गए और चिकित्सकों ने घोषित कर दिया कि उन्हें राज्यक्षमा हो गया है। दिन-प्रतिदिन उनका स्वास्थ्य गिरता गया। डॉक्टरों ने उन्हें काशी छोड़कर पहाड़ों पर जाने की सलाह दी, किन्तु प्रसादजी कभी काशी छोड़ना नहीं चाहते थे। परिणामत: सन् 1937 में 48 वर्ष की अल्पायु में ही उन्होंने यह शरीर छोड़ दिया। विश्व साहित्य में अपनी विशिष्ट पहचान बनाने वाला वह आकर्षक तथा प्रभावशील कामायनी' जैसा उत्कृष्ट महाकाव्य देकर सभी को आश्चर्यचकित कर दिया, दुर्भाग्य से असामयिक मृत्यु का शिकार हो गया। इस युगान्तकारी भव्य व्यकित के व्यक्तित्व तथा उद्देश्य को समझने के लिए उन्हीं की ये पंक्तियाँ कितनी सटीक जान पड़ती हैं

इस पथ का उद्देश्य नहीं है,
शान्त भवन में टिक रहना।
किन्तु पहुँचना उस सीमा तक,
जिसके आगे राह नहीं।

टिप्पणी

5.8 रचनाएँ और रचना संसार

भावनाओं के मधुर गायक तथा काव्य की विशिष्ट सृष्टि के निर्माता जयशंकर प्रसाद जितने महान हैं, उनका रचना संसार भी उससे कम विशाल या विराट नहीं। इस महान कृतिकार ने कविकर्मी जीवन साधना में संसार के अनुभवों की मार्मिक प्रतिक्रिया को भाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति देकर साहित्य को प्रेरणा प्रदान की तथा पूरे संसार को एक नव्य-बोध भेंट किया। सांस्कृतिक चेतना से ओत-प्रोत साहित्य भंडार देने वाले बहुमुखी प्रतिभा के इस धनी व्यक्तित्व ने काव्य, नाटक, उपन्यास, कहानी तथा निबंध जैसी कई विधओं में एक साथ मानव समाज देश, तथा युग की अनेकों समस्याओं को ही उजागर नहीं किया उनके समाधरन की राह भी प्रशस्त की। पद्य और गद्य में बराबर अधिकार रखते हुए इतिहास और संस्कृति के समर्थ आख्याता बने। महाकवि प्रसाद पूरे हिन्दी साहित्य में सबसे अलग दिखाई पड़ते हैं। अपने व्यक्तिवादी रूप में वेदना, करूणा तथा प्रेम दर्शान की अभिव्यक्ति करते हुए प्रसाद एक उच्चतम भाव-भूमि पर पहुँचते हैं और यही समग्र विश्व का आत्मवाद, आनन्दवाद तथा आध्यात्मिकता की भावना से परिचय भी कराते हैं।

5.9 रचनाएँ

जयशंकर प्रसाद बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। उन्होंने विविध विधओं में 67 रचनाएँ प्रस्तुत की।

काव्य रचनाएँ

कामायनी- यह महाकाव्य छायावादी काव्य का प्रथम उत्कृष्ट ग्रंथ है। इसमें मनु और श्रृद्धा के माध्यम से मानव को हृदय (श्रृद्धा) और बुद्धि (इड़ा) (इड़ा) के समन्वय का महान संदेश दिया है। इसके साथ ही इसमें मानव सभ्यता के विकास की कथा रूपक के द्वारा प्रस्तुत की गई है।

आँस- यह प्रसाद जी का विशुद्ध विरह-काव्य है। इसमें सौन्दर्य और प्रेम का सुन्दर चित्रण देखने को मिलता है।

झरना

इस काव्य कृति में प्रेम और सौन्दर्य के साथ प्रकृति के मनोरम रूप का चित्रण देखने को मिलता है। यह प्रसाद जी की छायावादी कविताओं का संग्रह है।

लहर

इसमें छायावाद का प्रौढ़तम रूप पल्लवित हुआ है।

कानन-कुसुम

यह प्रसाद जी की फुटकर रचनाओं का संकलन है। सन् 1909 से सन् 1917 तक की 49 स्फुट कविताएँ एकत्र की गई हैं। चित्राधर इसमें प्रसाद जी की ब्रजभाषा की कविताएँ हैं। यह कवि की सबसे पहली काव्य कृति हैं। सन् 1909 से 1912 तक की पाँच रचनाएँ उसमें समाहित हैं।

"अयोध्या का उद्धार", "वन-मिलन", "प्रेम-राज्य" (पूर्वाद्ध तथा उत्तरार्द्ध), "पराग" और "मकरन्द बिन्दु" नामक इन रचनाओं में 'पराग' ऐसा काव्य संग्रह है जिसमें 24 स्फुट कविताएँ संकलित हैं। इसके बाद "प्रेम-पथिक", "करूणालय" तथा "कानन कुसुम" सन् 1913 में प्रकाशित हुई। सन् 1914 में "महाराजा का महत्व" प्रकाशित हुई।

जागो फिर एक बार 'जयशंकर प्रसाद'

प्रसाद जी ने अपनी काव्य-यात्रा आठ-नौ वर्ष की अवस्था में प्रारम्भ कर दी थी। नौ वर्ष की अवस्था में प्रसाद को संस्कार सम्पन्न कराने के लिये जौनपुर और विन्ध्यांचल ले जाया गया तो पर्वतीय सुषमों

टिप्पणी

और भूमि के अंक में कलकल नाद करते झरनों के प्राकृतिक सौन्दर्य ने कवि के बाल-हृदय को मुग्ध कर दिया। इसी प्राकृतिक वैभव पर रीझकर उन्होंने "कलाघर" उपनाम से कविता का सृजन किया था। 1906 में यह कविता श्भारतेन्दुश में प्रकाशित भी हुई थी।

हारे सुरेश रमेश धनेश गनेशह, सेस न पावत पारे।
पारे हैं कोटिक पातकी पुंज. कलाधर ताहि दिनोबिच तारे।
तारेन की गिनती सम नाहिं, सुवेते तरे प्रभु पापी बिचारे।
चारे चले न विरंचहि के, जो दयालु है संकर नेक निहारे।

ब्रजभाषा में कविता लेखन प्रारम्भ करने वाले इस कवि ने "इन्दु" पत्रिका के दूसरे अंक में 'प्रेम-पथिक' प्रकाशित कराया।

मूलतः ब्रजभाषा में लिखी गई इस रचना को बाद में कवि ने खड़ी बोली में रूपान्तरित भी किया। अधिक दिनों तक ब्रजभाषा में कविता न करने वाले प्रसाद ने अपने भावों को युग और परिवेश की अपेक्षा के अनुसार ही खड़ी बोली में ढालना प्रारम्भ किया। धीरे-धीरे वे खड़ी बोली के शीर्षस्थ कवि पद पर आविराजे। भाषा, छन्द, भाव तथा विचार की दृष्टि से अनेकरूपता में भी समसता पैदा करने वाला यह गंभीर चिंतक आरम्भ में अयोध्यासिंह उपाध्याय की तरह संस्कृत गर्भित शैली को अपनाकर भी उसमें आश्चर्यजनक परिवर्तन करता है और अर्तमुखी कल्पना से सूक्ष्म भावनाओं को व्यक्त करने का फल प्रयास करता है। ब्रजभाषा में लिखित प्रारम्भिक कविताओं में प्रसाद प्रकृति को उद्दीपन के रूप में नहीं, आलम्बन के रूप में ग्रहण करने का प्रयत्न करते हैं। इसके बाद की कविताओं में प्रसाद ने संस्कृत साहित्य क भातर से एक सुसंस्कृत प्रेरणा प्राप्त कर कविता में अपनी नूतन भाव-अभिव्यक्ति के द्वारा हिन्दी काव्य संसार में ही नहीं समूचे विश्व काव्याकाश में की तथा अपना वैशिष्टय और नेतृत्व सिद्ध कर दिया। प्रसाद का अध्ययन गहन और व्यापक था। वेद, उपनिषद, इतिहास और संस्कृति काव्य का मननपूर्ण अध्ययन ही उनके कविता के उद्देश्य को निर्धरित करता है। "आँसू" के अन्त में कवि कहता है

सबका निचोड़ लेकर तुम,
सुख से सूखें जीवन में,
बरसों प्रभात हिमकन-सा
आँसू इस विश्व सदन में।

प्रसाद जी ने अपनी सभी काव्य-कृतियों में ऐतिहासिक सांस्कृतिक मूल्यों को धरोहर रूप में संजोया संवारा और निखारा है। 'प्रेम-पथिक' में प्रकृति का वैभव, प्रेम की अपारता तथा प्रेम का उदात्त, निर्मल एवं अलौकिक महत्व एक पथिक की यात्रा के द्वारा स्पष्ट किया गया है।; 'अयोध्या का उद्धार में अयोध्यानरेश महाराजा राम के ज्येष्ठ पुत्र कुश द्वारा अयोध्या के पुनरूत्थान का वर्णन किया गया है। यह कालिदासकृत 'रघुवंश' के सोलहवें सर्ग पर आधरित है। इसमें प्राकृतिक सुषमा के सुन्दर वर्णन के साथ-साथ राजा के कर्त्तव्य कर्म की भी सराहनीय व्याख्या की गई है।

"कानन-कुसुम" के अन्तर्गत आख्यानक प्रकृति-विषयक, भक्ति-विषयक और प्रेम-विषयक कविताएँ संकलित की गई हैं। महापुरूषों के प्रशस्तिगान तथा कुछ सामयिक समस्याओं को भी इन कविताओं में उजागर किया गया है।

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

पौराणिक और ऐतिहासिक आधर पर लिखित चित्रकूट, भारत, श्रीकृष्ण जयन्ती, कुरूक्षेत्र तथा वीर बालक आदि कुछ कविताएँ इसमें प्रमुख हैं। प्रभो नमस्कार, वंदना तथा विनय आदि कुछ कविताएँ भक्ति विषयक हैं। खड़ी बोली में रचित इन कृति में ही इन्द्रधनुष, चन्द्रोदय तथा प्रभातिक कुसुम जैसी छायावादी काव्य-रचनाएँ पहली बार प्रकाश में आई।

गद्य रचनाएँ

5.10 नाटक

"चन्द्रगुप्त", "स्कन्दगुप्त", "अज्ञातशत्रु", "ध्रुवस्वामिनी", राज्यश्री", "सज्जन", "जनमेजय का नाग यज्ञ", "करूणालय", "विशाख" आदि। **निबन्ध संग्रह**

'काव्य कला' तथा अन्य निबन्ध।

कहानी संग्रह

'छाया', 'प्रतिध्वनि', 'आकाशदीप', इन्द्रजाल' और 'आँधी'।

उपन्यास

'कंकाल', 'तितली' और 'इरावती' (अपूर्ण)।

करूणालय गीति नाट्य के ढंग पर लिखी गई महत्वपूर्ण कृति है। इसमें पाँच दृश्य है। इसमें राजा हरिश्चन्द्र द्वारा शुनः शेष के नरभेध यज्ञ में बलि दिये जाने की कथा का सुन्दर वर्णन किया गया है। नरमेघयज्ञ के इस युग को सामायिक समस्या के परिपेक्ष्य में देखने का सफलतम प्रयास प्रसाद ने किया है। भाषा खड़ी बोली ही है। 'महाराणा का महत्व' शीर्षक काव्य कृति के अन्तर्गत रहीम खान खाना की बेगम को राजपूतों द्वारा बंदी बनाये जाने और महाराणा प्रताप द्वारा उन्हें मुक्त कराके उनके पति के पास ससम्मान पहुँचा देने की ऐतिहासिक घटना का मार्मिक वर्णन है। कवि प्रसाद की अनुपम कल्पना और इतिहास की वीरता भरी गाथा का बिम्बात्मक वर्णन सराहनीय बन पड़ा है। ओज भरी, भाषा कविता की शक्ति बनी है। 'आँसू' प्रसादजी का उत्कृष्ट, गम्भीर, विशुद्ध मानवीय विरह काव्य है, जो प्रेम के स्वर्गीय रूप का प्रभाव छोड़ता है। इसीलिये कुछ लोग इसे आध्यात्मिक विरह का काव्य मानने का आग्रह करते हैं।

'आँसू' में शुद्ध रहस्यात्मक अनुभूति तथा लौकिक विरह भावना का अद्‌भुत मिश्रण है। रहस्यवादी भाव धरा वाली यह कृति छायावाद की अन्यतम कृति है। व्यापक प्रेम के इस अमर प्रेमी कवि ने इस कृति में सुख-दुःख में एक स्वस्थ सामन्जस्य स्थापित करना चाहा है। प्रतीक विधन तथा 28 मात्राओं वाला 'आँसू' छन्द इस कृति की विशिष्ट पहचान बनाते हैं। 'झरना' के अन्तर्गत वैयक्तिक प्रेम और विरह की एक अविरल धरा प्रवाहित होती है और यह 'आँसू' में ढलकर लहर में समाहित हो जाता है। मांसल अनुभूति धीरे-धीरे सूक्ष्म और छायात्मक बनती जाती है। व्यक्तिगत व्यथा धीरे-धीरे प्रकृति के कण-कण में परिवर्तित होंने लगती है। युवा-मिलन की प्रेम पगी आशा-निराशा, हर्ष-विषाद तथा विरह मिलन की हृदयस्पर्शी अभिव्यक्ति इसमें हुई है। यहीं रहस्यवादी विरह की व्यंजना भी पहली बार देखने को मिलती है। इस कृति में प्रसाद की भाषा और शैली निरंतर अपना रंग दिखाती आयी है।

'लहर' तक आकर भावना की अश्रु धराएँ धीरे-धीरे बौद्ध दर्शन की वैचारिक लहरों में समाने लगती है। बौद्ध दर्शन की करूणा कवि को एक नई दृष्टि देती है। यहीं आकर कवि 'आनन्दवाद' की कल्पना करता है। प्रसाद जी का दृष्टिकोण विशुद्ध मानवीय रहा है। वे जीवन की चिरन्तन समस्याओं का कोई चिन्तन माननीय समाधन खोजना चाहते हैं। इच्छा, ज्ञान और क्रिया का सामंजस्य ही उच्च मानवता

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

है, उसी की प्रतिष्ठा प्रसाद जी ने की है। प्रवृत्ति और निवृत्ति का यह समन्वय ही भारतीय संस्कृति की अनुपम देन है और कामायनी के माध्यम से यही संदेश प्रसाद जी ने सम्पूर्ण मानवता को दिया। आनन्दवाद की यह कल्पना 'कामायनी' तक आते-आते साकार होती है। पन्द्रह सर्गों के इस अन्यतम महाकाव्य में प्रसाद की काव्य प्रतिभा अपने चरम शिखर पर पहुँचकर सम्पूर्ण विश्व को प्रदीप्त करने लगती है। प्रतीकों के माध्यम से अन्य अर्थों को सफलतापूर्वक वहन करती, यह कर्मकथा भावों के अमूल्य रत्नों की धरोहर है। कामायनी प्रसाद-काव्य की सिद्धावस्था है। उनकी काव्य-साधना का पूर्ण परिपाक है। कवि के शाश्वत स्वरूप एवं मानव के मूल मनोभावों का काव्यमय चित्र अंकित किया है। प्रसाद जी ने नारी को दया, ममता, त्याग, बलिदान, सेवा, समर्पण, अगाध विश्वास आदि से युक्त बताकर उसे श्रद्धा का स्वरूप प्रदान किया है।

'नारी तुम केवल श्रृद्धा हो'

काव्य, दर्शन और मनोविज्ञान की त्रिवेणी 'कामायनी' निश्चय ही आधुनिक काल की सर्वोत्कृष्ट सांस्कृतिक रचना है।

प्रसाद जी छायावादी कवि हैं। प्रेम और सौन्दर्य उनके काव्य का प्रधन विषय है। मानवीय संवेदना उसका प्राण है। प्रकृति को सचेतन अनुभव करते हुये उसके पीछे परम सत्ता का आभास कवि ने सर्वत्र किया है। यही उनका रहस्यवाद है। प्रसाद जी का रहस्यवाद भाव सौन्दर्य से संचालित प्रकृति का रहस्यवाद है। अनुभूति की तीव्रता, वेदना, कल्पना-प्रवणता आदि प्रसाद काव्य की कुछ अन्य विशेषताएं हैं। प्रसाद जी व्यापक सौन्दर्य के उपासक हैं। प्रसाद जी के काव्य में देश प्रेम की पावन धरा प्रवाहित होती हुई दिखाई देती है। प्रसाद जी प्रकृति के कुशल चित्रकार हैं। उन्होंने प्रकृति पर सर्वत्र चेतना का आरोप किया है। आनन्द और आस्था के मार्गदर्शक प्रसाद ने कामायनी में बुद्धिवाद का विरोध करते हुए शैव दर्शन के आनन्दवाद को ही जीवन के पूर्ण उत्कर्ष का साधन घोषित किया है।

प्रसाद के समग्र काव्य संसार में एक आलौकिक तथा विलक्षण शक्ति विद्यमान है और उनके प्रगीतों में यह जयशंकर प्रसाद शक्ति अपनी चरम सीमा पर पहुँची हुई है। जीवन और दर्शन में परस्पर निर्भरता सिद्ध करते हुए इस महाकवि ने पौराणिकता एवं ऐतिहासिकता के परिप्रेक्ष्य में समूचे संसार को उद्‌बोधित करते हुए कहते भी हैं

'भुनती वसुध तपते नग
दुखिया है सारा अग जग
बह जा बन करूणा की तरंग
जलता है यह जीवन पतंग।'

छायावाद के प्रवर्तक प्रसाद जी की काव्य भाषा शुद्ध साहित्यिक खड़ी बोली है। आरम्भ में यह सहज और सरल है लेकिन ज्यों-ज्यों प्रसाद का अधययन बढता गया त्यों-त्यों उनकी भाषा गम्भीर और परिष्कृत भी होती गई। सूत्र भरे वाक्यों और संगीतमय गीतों में एक अद्‌भुत उन्माद है और यही उसका व्यावहारिक पक्ष है। प्रसाद के गीतों में वाक् वैदग्धयपूर्ण उक्तियों के माध्यम से वक्रता के भी सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत हुए हैं। सीधी सरल उक्तियों में वक्रोक्ति एक विशेष अर्थ भर देती है। प्रसाद इस कला में अत्यंत निपुण हैं- 'तपस्वी के विराम की प्यार तथा दूध भरी दूध सी दुलार भरी माँ की गोद' आदि पंक्तियों में प्रसाद जी की यह कलात्मकता भी देखी जा सकती है।

प्रसाद जी की काव्य भाषा का एक अन्य वैशिष्टय है। श्वर्ण-संगीत का प्रभावी प्रयोगश प्रसाद जी के काव्य में मुहावरों का प्रयोग दृष्टव्य है

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

'कौड़ी के मोल बेचा जीवन का मणिकोष
और आकाश को पकड़ने की आशा में
हार बैठे जीवन का दाँव,
जीतते जिसको मर करवीर।
और निरूपाय मैं तो ऐंठ उठी डोरी सी।'

प्रसाद जी की शैली में लटा और गीत का सामन्जस्य हैं प्रसाद ने लम्बे और छोटे दोनों प्रकार के गीत लिखे हैं। 'टेक' की पंक्ति अपेक्षानुसार छोटी बड़ी होकर गीत के सौन्दर्य में वृद्धि करती हैं प्रसाद जी की 'चतुर्दशपदी' का सुन्दर प्रयोग भी शैली में चार चाँद लगाता है।

'निज अलकों के अन्धकार में तुम कैसे छिप पाओगे'

इसका सुन्दर उदाहरण है। देश प्रेम की भावना से प्रभावित होकर वे वीररस भरी ओजमयी शैली अपनाकर मनमोहक शब्दचित्र बना देते हैं। उनका काव्य चम्पू काव्य और खण्ड काव्य आदि कई रूपों में मिलता है।

अत: हम कह सकते हैं कि श्रृंगार, वीर, करूण, शांत तथा वात्सल्य आदि के सुन्दर काव्य चिन्ता, लज्जा, निर्वेद तथा काम आदि अमूर्त भावनाओं को मूर्त करने वाला महान एवं अद्वितीय शैली का काव्य है।

5.11 खोलो द्वार

शिशिर कणों से लदी हुई,
कमली के भीगे हैं सब तार
चलता है पश्चिम का मारुत,
ले कर शीतलता का भार।
भीग रहा है रजनी का वह,
सुंदर कोमल कवरी-भार,
अरुण किरण सम, कर से छ लो,
खोलो प्रियतम! खोलो द्वार।
धूल लगी है, पद काँटों से
बिंध हुआ है, दु:ख अपार,
किसी तरह से भूला भटका
आ पहुंचा हूँ तेरे द्वार।
होगा नहीं तुम्हारा द्वार
धे डाले हैं इनको प्रियवर
इन आँखों से आँसू ढार
मेरे धूलि लगे पैरों से,

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

इतना करो न घृणा प्रकाश,
मेरे ऐसे धूल कणों से,
कब तेरे पद को अवकाश!
पैरों ही से लिपटा लिपटा
कर लूँगा निज पद निर्धर,
अब तो छोड़ नहीं सकता हूँ
पाकर प्राप्य तुम्हारा द्वार।
सुप्रभात मेरा भी होवे,
इस रजनी का दु:ख अपार,
मिट जावे जो तुमको देखू
खोलो प्रियतम! खोलो द्वार।।

ये कविता जयशंकर प्रसाद जी के 'झरना' नामक काव्य में संकलित है। इस कविता के माध्यम से एक प्रेमी का वर्णन किया गया है जो अपनी प्रेमिका के द्वार पर खड़ा है और अपनी व्याकुलता को अभिव्यक्त करना चाह रहा है।

यहा पर जो प्रेमी है, वह एक व्यक्ति है. पीडीत है. दखी है जो प्रेमिका है वह ईश्वर है। जो दुखी, पीडीत, पापी व्यक्ति अपनी ईश्वर के दरवाजे पर पहुंचता है तब वह कैसी प्रार्थना करता है वह एक नायक और नायिका के माध्यम से इस कविता में व्यक्त की गयी है।

प्रेमी अपनी नायिका के दरवाजे पर खड़ा है और निवेदन करता है। वह क्या कहता है- शिथिर कणों से लदी हुई कमली के भीगे है, सब तार अर्थात् शीत ऋतु में आने वाली जो शीतल कण है, उनसे लदी हुई है। कमली अर्थात् छोटा वस्त्र ओढ़ने का या कम्बल। ये तार-तार हो गए हैं अर्थात् जो इसकी दशा है, वह अच्छी नहीं है। यह शीतल हो गया है जो ओढ़ने का वस्त्र है वह पूर्ण रूप से भीग गया है। चलता है पश्चिम का मारूत। लेकर शीतलता का भार। अर्थात् पश्चिम दिशा की जो वाय है वह चल रही है अत्यधिक शीतल है। भीग रहा है रजनी का वह, सुंदर कोमल कवरी भार। अर्थात् रात्रि की शीतलता की अधिक अभिव्यक्ति करने के लिए उदाहरण देते हैं कि भीग रहा है रजनी अर्थात् रात्रि रूपी का नायिका का सुंदर कंवली भार अर्थात् जो नायिका का केश है रजनी रूपी नायिका के, वो भी पूर्ण रूप से भीग रहे हैं। अर्थात् बहुत अधिक सर्दी हो परिस्थितियां विपरीत हैं।

- अरूण किरण सम, अर्थात् अरूण की किरण के समान, अर्थात् सूर्य की किरण के समान, कर से छू लो, खोलो प्रियतम, खोलो द्वार। अर्थात् हाथ से सूर्य की किरण के समान अर्थात् कहते हैं कि जो सूर्य की रोशनी है वह गर्मी भी देती है तथा प्रकाश भी देती है। इसीलिए कवि कहते हैं कि सूर्य की किरण के समान जो तुम्हारे हाथ हैं, उनसे मुझे छू लो। स्पर्श करो। हे प्रियतम अपनी अपनी द्वार खोलो और मुझे अंदर आने दो।

यहां पर जो नायक है, वह अपनी प्रेमिका स्त्री ईश्वर से कहते हैं, कि आप मुझे अपना लो। इसी प्रकार का निवेदन करते हैं।

धल लगी है, पद कांटो से बिछा हुआ है, दुख अपार। अर्थात् जो बहुत लंबा सफर कहीं से करके आता है, उसके पैरों में धूल लगी होती है इसीलिए कवि कहते हैं कि माना कि मेरे पैरों में बहुत

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

धूल लगी है क्योंकि मैं बहुत लंबा सफर तय करके आया हूँ अर्थात् जो मानव है, बहत अधिक संसार में भटकने के पश्चात् ईश्वर के शरण में जाता है तो वह कहता है कि धूल लगी है। मेरे जीवन में दुख अपार है अत्यधिक पीड़ा मैने सहन की है। बहुत अधिक विपरीत परिस्थितियां मेरे जीवन में आयी है। किसी तरह से भूला भटका आ पहुंचा हूँ तेरे द्वार। लेकिन अब मुझे इस बात का अहसास हो गया है कि मेरा उद्धार कहां होगा। वह तेरे ही द्वार पर होगा इसीलिए भूला भटका तुम्हारे पास आ गया हूँ अर्थात् मैनें अब तक बहुत पाप किये हैं, मैं भटकता रहा, किंतु अब तुम्हारे दरवाजे पर पहुंच गया हूँ। डरो न इतना। वह कहते हैं मुझ से आप इतना न डरो, धूल धूसरित होगा नहीं तुम्हारा द्वार। कि मेरे साथ जो पाप आए हैं, धूल के रूप में, या बुराइयों के रूप में उनसे तुम्हारा द्वार धूल से धूसरित नहीं होगा, धूल से नहीं सनेगा।

धे डाले है इनको प्रियवर, इन आंखो से आंसू तार अर्थात् हे ईश्वर मैने इन चरणों को धे दिया है। मेरे पैरों में जो मिट्टी लगी थी, वह मैने धे डाले हैं। मैने अपने आंखों के आंसुओं से अपने पैरों को धे लिया है अर्थात् यहां कवि कहना चाहते हैं कि मैने तो पा किये थे, पापों रूपी धूल जो मेरे साथ चिपकी हुई थी, वो मैने आंसूओं के द्वार प्रायश्चित करके धे डाली है इसीलिए आप अपने द्वार खोल दो। मेरे धूल लगे पैरों से, करो न इतना घृणा प्रकाश। यहां पर कवि कहते हैं, हे प्रकाश, अर्थात् ईश्वर, तेज। अर्थात् मेरे धूल लगे पैरो से, अर्थात् मुझ पापी व्यक्ति से, करो न इतना घृणा, इतनी नफरत मत करो। माना कि मेरे साथ चिपके हुए हैं, मैने बहुत से पाप किये हुए है, बहुत सी बुराइयां है मुझमें, लेकिन आप मुझसे इतनी घृणा मत करो। मेरे ऐसे धूल कणो से, कब तेरे पद को अवकाश अर्थात् मेरे ऐसे धूल लगे हुए कणों से, मेरे साथ जो पाप चिपके हैं उनमें कब तुम्हें अवकाश प्राप्त होगा, अर्थात् तुम उनसे मुक्ति प्राप्त नहीं कर सकते। उनसे तुम दूर नहीं भाग सकते। तुम मुझे यहां छोड़ नहीं सकते अर्थात् जब तक तुम मेरा उद्धार नहीं करोगे, तुम्हें मैं यहां से छोड़कर नहीं जाऊंगा।

पैरों से ही लिपटा-लिपटा, कर लूंगा निज पद निर्धर। मैं आपके चरणों से ही लिपट-लिपट कर आपके चरणों में अपना स्थान बना लूंगा। मुझसे आपको अवकाश नहीं मिलेगा।

अब तो छोड़ नहीं सकता हूँ, पाकर प्राप्य तुम्हारा द्वार। अर्थात् जिसे मैनें प्राप्त कर लिया है, जिसे प्राप्त करना चाहता था, उसे मैं अब तुम्हारे दरवाजे को छोड़कर नहीं जाऊंगा।

सुप्रभात मेरा ही होवे, इस रजनी का दुख अपार। अर्थात् यहां प्रेमी कहता है पीड़ित व्यक्ति कहता है इस रजनी स्त्री जो अंधकार मेरे जीवन में आ गया है, इसका दुख अब सहन नहीं होता। यह पीडा अत्यधिक है। मिट जावे जो तुझको देखू, खोलो प्रियतम! खोलो द्वार।।

वे निवेदन करते हैं, अगर मै सिर्फ एक बार तुम्हारे दर्शन कर लूं, तो मेरे जीवन से ये रात्रि, दुख समाप्त हो जाएगा। हे प्रिय! आप अपने द्वार खोल दो, मै तुम्हे देखकर प्रसन्न हो जाऊं और मेरे जीवन के सारे दुख समाप्त हो जाएं।

इस प्रकार एक भगत अने भगवान से प्रार्थना करता है, वो भगत जिसने अने जीवन में अनेक पाप किये है, लेकिन अब तो अपने पापों का प्रायश्चित करना चाहता है इसीलिए वह निवेदन करता है कि मेरे पापों को भूलकर आप मुझे अपना लो अपने चरणों में मुझे स्थान दो।

यहां पर जयशंकर प्रसाद जी की भाषा है ये, इसमें संस्कृतनिष्ठ हिंदी का सफल प्रयोग किया गया है। लाक्षणिक एवं प्रतीकात्मक भाव का भी प्रयोग किया गया है।

टिप्पणी

5.12 किरण

किरण! तुम क्यों बिखरी हो आज,
रँगी हो तुम किसके अनुराग,
स्वर्ण सरजित किंजल्क समान,
उड़ाती हो परमाणु पराग।
धरा पर झुकी प्रार्थना सदृश,
मधुर मुरली, सी फिर भी मौन,
किसी अज्ञात विश्व की विकल,
वैदना-दूती सी तुम कौन?
अरुण शिशु के मुख पर सविलास,
सुनहली लट घुघराली कान्त,
नाचती हो जैसे तुम कौन?
उषा के चंचल में अश्रान्त।
भला उस भोले मुख को छोड़,
और चूमोगी किसका भाल,
मनोहर यह कैसा हैं नृत्य,
कौन देता सम पर ताल?
कोकनद मधु धरा-सी तरल,
विश्व में बहती हो किस ओर?
प्रकृति को देती परमानन्द,
उठाकर सुन्दर सरस हिलोर।
स्वर्ग के सूत्र सदृश तुम कौन,
मिलाती हो उससे भूलोक?
जोड़ती हो कैसा सम्बन्ध,
बना दोगी क्या विरज विशोक!
सुदिनमणि-वलय विभूषित उषा
सुन्दरी के कर का संकेत
कर रही हो तुम किसको मधुर,
किसे दिखलाती प्रेम-निकेत?
चपल! ठहरो कुछ लो विश्राम,
चल चुकी हो पथ शून्य अनन्त,

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

सुमनमन्दिर के खोलो द्वार,
जगे फिर सोया वहाँ वसन्त।

5.13 आँसू

आंसू मूलत : एक विरह काव्य है जिसमें कवि ने एक बिरही युवा हृदय की विरह वेदना को अत्यन्त संजीव, सरस और भावपूर्ण शैली में व्यक्त किया गया है। आंसू हिन्दी के छायावादी काव्य के एक ऐसे कीर्तिमय स्तम्भ के रूप में है जिसकी आभा आज भी उतनी ही गरिमामय और महिमापूर्ण बनी हुई है। जितनी कि दूसरे प्रथम प्रकाश के समय रही थी। कतिपय आलोचकों ने आंसू में अध्यात्म अथवा छायावाद को ढूंढने का प्रयास किया किन्तु सच यह है कि आंसू में बिरही मन की वेदना को कवि ने इतनी खूबी के साथ वर्णित किया है कि उसे किसी साहित्यिक वाद के घेरे में बांधने की लेशमात्र भी आवश्यकता नहीं है। हिन्दी के महान आलोचक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने आंसू के विरह वर्णन की प्रशंसा करते हुए एक स्थल पर कहा है कि अभिव्यंजना की प्रगल्भता और विचित्रता के भीतर प्रेमवेदना की दिव्य विभूति का, विश्व के मंगलमय प्रभाव का सुख और दुख दोनों को अपनाने की उसकी अपार शक्ति का और उसकी छाया में सौन्दर्य और मंगल के संगम का भी आभास पाया जाता है। आंसू के सम्बन्ध में आचार्य शुक्ल के उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो जाता है कि आंसू केवल विरही मन की तड़पन अथवा छटपटाहट की अभिव्यक्ति नहीं है अपितु उसके भीतर लोकमंगल की पावनी भावना भी अनुस्यूत है। इसी संदर्भ में आचार्य नन्द दुलारे वाजपेयी का यह कथन भी उल्लेखनीय है कि हिन्दी में इसकी गणना थोड़ी सी उत्कृष्ट रचनाओं में की जा सकती है। आधुनिक हिन्दी में जो थोड़े से प्रथम श्रेणी के विरह गीत है, उनमें आंसू की भावना संकलन श्रेष्ठ होने के कारण वही उत्तम गीत है। आंसू के अध्यात्म और छायावाद आदि का नाम लेकर उसे जटिल बना देने के पहले उसको उसके प्रकृत रूप में देखना चाहिए। विरह का इतना मार्मिक वर्णन करने वाले कवि को किसी वाद की छाया लेने की जरूरत नहीं-उसकी उच्चता स्वत: सिद्ध है।

हिन्दी काव्य में विरह वर्णन की परम्परा काफी पुरानी कही जा सकती है। विशेष रूप से रीतिकालीन कविता में इस प्रकार का वर्णन प्रचुर मात्रा में मिलता है। तथापि उस वर्णन में अध्यात्मिकता की प्रमुखता है और कदाचित इसी कारण रीतिकालीन विरह काव्य पाठक के मन को नहीं छू पाता। इसके विपरीत आंसू का विहर-वर्णन अन्तकरण की संपूर्ण भावनाओं को अपने भीतर संजोए हुए हैं और इस कारण वह आज भी पाठक के मन को झझकोरने की क्षमता रखता है। एक विद्वान आलोचक के शब्दों में आंसू के प्रत्येक पृष्ठ पर विकल वेदना सुख को ललकार रही है दृगजल को ईंधन बनाकर शीतल ज्वाला जल रही है, अभिलाषाएं करवटें बदल रही है, सुप्त व्यथाएं फिर से जाग रही है, मधुर प्रेम की पीड़ा हृदय को हिला रही है, करूणा एक कोने में बैठी बैठी रो रही है और विरही का हृदय समाधि बन गया है। यही नहीं प्रस्तुत खण्ड काव्य में विरही मन की घनीभूत पीड़ा दुर्दिन में आंसू बनाकर प्रवाहित हो रही है, विरहदग्ध मन रो-रोकर अपनी व्यथा का वर्णन कर रहा है और एक प्रेमी है जो निरन्तर उसकी उपेक्षा किए जा रहा है।

जो घनीभूत पीड़ा थी,
मस्तक में स्मृति सी छायी।
दुर्दिन में आंसू बनकर,
वह आज बरसने आयी तथा।

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

रो रोकर सिसक-सिसक कर,

कहता मैं करूण कहानी।

तुम सुमन नोचते सुनते,

करते जानी अनजानी।

आंसू के विरही को प्रिय का वियोग ही नहीं, प्रकृति का कण कण भी साल रहा है। आकाश पर घिरती घनघोर घटाएं जब उसे श्रृंगार की उददीपक नहीं अपितु प्रलय की घटाओं सरीखी प्रतीत होती है। स्वाभावत: विरह के इन क्रूर क्षणों में उसे प्रिय के साथ बिताए गए संयोग के मधुर दिनों की सुखद स्मृतियां आ घेरती हैं। विरहदग्ध हृदय को अतीत की मधुर स्मृतियों में खो जाने से एक त्राण सा मिल जाता है जीने का एक सहारा मिल जाता है, निराशा में आशा की किरण फूट पड़ती है। आंसू के विरही को प्रेमी से मिलते ही मानों सब कुछ मिल जाता है और वह मिलन के आवेगमय क्षणों में अपनी चेतना तक खो बैठता है। चेतना के लौटने पर उसका दु:ख और अधिक बढ़ जाता है क्योंकि तब तक उसका प्रेमी उसे छोड़कर पुन: कहीं और जा चुका होता है। मिलन के क्षण तो वैसे भी गिने चुने होते हैं। विरही को पुन: वही निराशा, वेदना, विरहजन्य पीड़ा आ घेरती है। उसे ध्यान आता है कि इसी प्रेम वेदना ने कभी उसके लिए सुखमय संसार जुटा दिया था, प्रेम के मोहपाश में फंसकर वह सब कुछ भूल गया था और आज वही प्रेम वेदना है जो उसे ही नहीं उसके आसपास के समूचे वातावरण को विषाक्त किए हुए है। विरही की वेदना अपरिमित हो गई है अखिल ब्रह्माण्ड में चेतन-अचेतन कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं बच पाया है जिसमें वेदना व्याप्त न हो। विरही को लगता है कि उसकी वेदना केवल उसी को नहीं अपितु संपूर्ण विश्व में व्याप्त हो गई है। फलत: विरही अपने आंसुओं के सहारे अखिल विश्व को शांति और शीतलता प्रदान करना चाहता है। कवि चाहता है कि उसकी प्रेम वेदना आंसू बन कर ओस की बूंदों की तरह समस्त दुखी प्राणियों पर बरसे। उसका दृढ़ विश्वास है कि यदि सारे संसार में प्रेम वेदना में उत्पन्न आंसुओं की वृष्टि होगी तो अखिल सृष्टि के भीतर प्रेम की पीर समा जाएगी और फिर कोई भी किसी के प्रति निष्ठुर अथवा कठिन नहीं हो पाएगा। सारी सृष्टि आनन्दविभोर हो जाएगी, सर्वत्र प्रेम जन्य आत्मीयता का प्रसार हो जाएगा कवि के शब्दों में:

सबका निचोड़ लेकर तुम,

सुख से सूखे जीवन में।

अरसों प्रभावत हिमकन-सा,

आंसू इस विश्व सदन में।

काव्यशास्त्रीय दृष्टि में विप्रलम्भ श्रृंगार की दस कामदशाओं का विधन है। विद्वानों ने इन दस कामदशाओं के नाम इस प्रकार बताए हैं: अभिलाषा, चिन्ता, स्मृति, गुणकथन, उद्वेग, प्रलाप, जन्माद, व्याधि, जड़ता और मरण।

जहां तक आंसू काव्य में वर्णित विप्रलम्भ श्रृंगार का प्रश्न है उसमें इन सभी कामदशाओं का चित्रण मिलता है। जब कभी विरही अपने प्रेमी के कल्याण सुख सुविध के लिए मन ही मन कामना करता है तो उसकी यह कामना भारतीय शब्दावली में अभिलाषा नामक कामदशा की परिचायक होती है। इस दृष्टि से आंसू काव्य की निम्न पंक्तियों देखिए जिनमें बिरही के मन की ऐसी ही कामना के दर्शन होते है:

हे जन्म जन्म के जीवन साथी संसृति के दुख में,

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

पावन प्रभात ही जावे जाणी आलस के सुख में।

जगती का कलुश अपावन तेरी विदग्धता पावे,

फिर निखर उठे निर्मलता वह पाप पुष्प ही जावे।

चिन्ता विरही मन की एक स्वाभाविक क्रिया है। प्रिय के वियोग में विरही नाना प्रकार की चिन्ताओं से घिरा रहता है। प्रस्तुत पंक्तियों में इसी प्रकार की चिन्ता के दर्शन होते हैं।

हीरे-सा हृदय हमारा कुचला शिरोष कोमल ने,

हिम शीतल अपणा बन अब समा विरह से जलने।

वियोग के दु:खद क्षणों में विरही का मन मधुर स्मृतियों में खो जाता है। जब-जब उसे प्रिय का विरह कचोटता है, तब तक वह मिलन की सुखद स्मृतियों में खो जाता है जहां उसके विरहदग्ध हृदय को त्राण मिलता है। मिलन की मधुर स्मृतियां विरहजन्य पीड़ा को शमित कर देती है। आंसू की निम्न पंक्तियों में स्मृति नामक यही काम दशा परिलक्षित होती है:

बस गई एक बस्ती है स्मृतियों की इसी हृदय में,

नक्षत्र लोक फैला है जैसे इस नील निलय में।

ये सब स्फुलिंग है मेरी इस ज्वालामयी जल के,

कुछ चिन्ह है केवल मेरे इस महामिलन के।

विप्रलम्भ श्रृंगार की एक अन्य कामदशा गुणकथन होती है जिसमें विरही मन प्रिय के उन गुणों को याद करता है जिनसे वह सर्वाधिक प्रभावित रहा हो। प्रिय के वियोग में विरही को स्वभावत: उसके सुन्दर गुणों की याद हो आती है और वह बार-बार उन्ही का कथन करता रहता है। इस दृष्टि से आंसू नामक काव्य की निम्न पंक्तियां दृष्टव्य है जिनमें विरही प्रिय के गुणों का कथन कर रहा है।

पतझड़ था, झाड़ खड़े थे, सूखी सी फुलवारी में

किसलय नव कुसुम बिछाकर आए तुम इस क्यारी में।

शशिमहल पर चूंघट डाले, अंचल में दीप छिपाए

जीवन की गोधूली में कौतुहल में तुम आए।

कभी-कभी विरही मन निराशा और हताशा के कारण अत्यधिक व्यग्र हो उठता है, उसका दुखी हृदय आहे भरने लगता है, उसकी पीड़ा उसे बुरी तरह झकझोर देती है। जिससे वह उद्विग्न हो उठता है। विरही मन की इस मनस्थिति को शास्त्रीय भाषा में उद्वेग कहते हैं। आंस की निम्न पंक्तियों में यह उद्वेग व्यक्त हुआ है।

हीरे-सा हृदय हमारा कुचला विशेष कोमल ने

हिम शीतल प्रणय अनल बन अब लगा बिरह में जलने।

तथा

जल उठा स्नेह दीपक-सा नवजीत हृदय था मेरा,

अवशेष घूम रखा से चित्रित कर रहा अंधेरा।

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

विप्रलम्भ श्रृंगार की एक अन्य कामदशा प्रलाप होती है जिसका आशय विरहजन्य रोदन से होता है। विरहजन्य पीड़ा की अतिशयता के कारण विरही का हृदय रो-रो उठता है। विरही मन के इसी रोदन को प्रलाप कहते हैं। आंसू की निम्न पंक्तियां इसी प्रलाप की द्योतक है:

नाविक! इस सूने तट पर किन लहरों में खे लाया,
इस बीहड़ वेला में क्या अब तक या कोई आया?
उस पार कहां फिर जाऊं तम के मलीन अंचल में
जीवन का लोभ नहीं यह वेदना छमदमय छल में।

विहरजन्य वेदना की अतिशयता कभी कभी विरही मन में उन्मान की-सी स्थिति उत्पन्न कर देती है। ऐसी मन स्थिति में विरहीमन को अपनी प्रकृत स्थिति का भी बोध नहीं रह पाता और उसका आचरण पागलपन की सीमा तक पहुंच जाता है। विरही मन की इसी मन को उन्माद की स्थिति कहते हैं जिनकी पहचान आंसू की निम्न पंक्तियों में ढूंढी जा सकती है।

इतना सुख ले पल भर में जलवन के अस्तस्थल से
तुम खिलक गए धीरे से रोते अब प्राण विकलसे
क्यों छलक रहा दुख मेरा ऊषा की मृदु पलकों में
हां उलझ रहा सब मेरा संध्या की धन अलकों में।

विरहीमन की बेचौनी व्यग्रता की स्थिति को व्याधि कहते है। विरह जन्य वेदना सहन करते करते विरहीमन टूट जाता है, उसे कहीं भी आशा की धूमिल-सी किरण भी नहीं दिखाई देती है। मन के भीतर की इसी व्यग्रता तथा छटपटाहट को व्याधि कहते हैं। आंसू की निम्न पंक्तियों में इसी काम दशा का वर्णन मिलता है।

अभिलाषाओं की करवट फिर सुप्तव्यथा का जगना
सुख का अपना हो जाना भोगी पलकों का लगना
इस हृदय कमल का घिरना अलि अलकों की उलझन में
आंसू मरंद का गिरना मिलना निश्वास पवन में।

जड़ता की स्थिति में बिरही व्यक्ति की चेतना जवाब दे चुकी होती है। रूप सौन्दर्य को देखकर वह ठगा-सा रह जाता है। एक प्रकार से वह मंत्रमुग्ध हो जाता है उसमें शक्ति और सामर्थ्य जैसी बातें नहीं रह जाती। जड़ता की इस मन:स्थिति का वर्णन आंसू की निम्न पंक्तियों में हुआ है।

मैं अपलक इन नयनों से देखा करता उस छवि को
प्रतिभा डाले भर लाता कर देता दान सुकवि को
निझर-सा झिर-झिर करता माध्वी कुंज छाया में
चेतना बही जाती थी हो मंत्र मुग्ध माया में।

विरहजन्य वेदना का चरमरूप चेतनाशून्य में होता है जबकि विरही व्यक्ति का तन मन दोनों ही टूट जाते हैं। उसके अंर्तमन में न तो कोई भाव उदित होते हैं न कोई विचार ही प्रस्फुटित होते है। उसके भीतर स्पन्दन जैसी कोई बात नहीं रह पाती वह सर्वथा निष्प्राण निर्जीव बन जाता है। वह पूरी तरह

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

मरता भी नहीं है किन्तु उसकी गणना जीवितों में भी नहीं की जा सकती। आंसू की निम्न पंक्तियों में इसी मरण दशा का वर्णन किया गया है:

सुख आहत, शान्त उंमगे बेगार सांस ढोने में
यह हृदय समाधि बना है रोती करूणा कोन में।

इस प्रकार आंसू काव्य में विप्रलभ श्रृंगार की सभी कामदशाओं का चित्रण देखा जा सकता है। कदाचित इसी कारण आंसू को विप्रलंभ श्रृंगार की एक अनुपम कृति कहा गया है।

5.14 आशा सर्ग (कामायनी)

उठे स्वस्थ मनु ज्यों उठता हैं
क्षितिज बीज अरूणोदय कांत,
लगे देखने लुब्ध नयन से
प्रकृति- विभूति मनोहर, शांत।
पाकयज्ञ करना निश्चित कर
लगे शालियों को चुनने,
उधर वह्नि-ज्वाला भी अपना
लगी धूम-पट थी बुनने।
शुष्क डालियों से वृक्षों की
अग्नि-अर्चिया हुई समिद्ध।
आहुति के नव धूमगंध से
नभ-कानन हो गया समृद्ध।
और सोचकर अपने मन में
"जैसे हम हैं बचे हुए
क्या आश्चर्य और कोई हो
जीवन-लीला रचे हुए,"
अग्निहोत्र-अवशिष्ट अन्न कुछ
कहीं दूर रख आते थे,
होगा इससे तृत्त अपरिचित
समझ सहज सुख पाते थे।
दुख का गहन पाठ पढकर
अब सहानुभूति समझते थे,
नीरवता की गहराई में

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

मग्न अकेले रहते थे।
मनन किया करते वे बैठे
ज्वलित अग्नि के पास वहाँ,
एक सजीव, तपस्या जैसे
पतझड़ में कर वास रहा।
फिर भी धड़कन कभी हृदय में
होती चिंता कभी नवीन,
यों ही लगा बीतने उनका
जीवन अस्थिर दिन-दिन दीन।
प्रश्न उपस्थिति नित्य नये थे
अंधकार की माया में,
रंग बदलते जो पल-पल में
उस विराट की छाया में।
अर्ध प्रस्फुटित उत्तर मिलते
प्रकृति सकर्मक रही समस्त,
निज अस्तित्व बना रखने में
जीवन हुआ था व्यस्त।
तप में निरत हुए मनु,
नियमित-कर्म लगे अपना करने,
विश्वरंग में कर्मजाल के
सूत्र लगे घन हो घिरने।
उस एकांत नियति-शासन में
ले विवश धीरे-धीरे,
एक शांत स्पंदन लहरों का
होता ज्यों सागर-तीरे।
विजन जगत की तंद्रा में
तब चलता था सूना सपना,
ग्रह-पथ के आलोक-वृत से
काल जाल तनता अपना।
प्रहर, दिवस, रजनी आती थी

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

चल-जाती संदेश-विहीन,
एक विरागपूर्ण संसृति में
ज्यों निष्फल आरंभ नवीन।
धवल, मनोहर चंद्रबिंब से
अंकित सुंदर स्वच्छ निशीथ,
जिसमें शीतल पावन गा रहा
पुलकित हो पावन उद्‌गगीथ।
नीचे दूर-दूर विस्तृत था
उर्मिल सागर व्यथित, अधीर
अंतरिक्ष में व्यस्त उसी सा
चंद्रिका-निधि गंभीर।
खुली उस रमणीय दृश्य में
अलस चेतना की आँखे,
हृदय-कुसुम की खिली अचानक
मधु से वे भीगी पाँखे।
व्यक्त नील में चल प्रकाश का
कंपन सुख बन बजता था,
एक अतींद्रिय स्वप्न-लोक का
मधुर रहस्य उलझता था।
नव हो जगी अनादि वासना
मधुर प्राकृतिक भूख-समान,
चिर-परिचित-सा चाह रहा था
द्वंद्व सुखद करके अनुमान।
दिवा-रात्रि या मित्र वरूण की
बाला का अक्षय श्रृंगार,
मिलन लगा हँसने जीवन के
उर्मिल सागर के उस पार।
तप से संयम का संचित बल,
तृषित और व्याकुल था आज
अट्टाहास कर उठा रिक्त का

टिप्पणी

वह अधीर-तम-सूना राज।
धीर-समीर-परस से पुलकित
विकल हो चला श्रांत-शरीर,
आशा की उलझी अलकों से
उठी लहर मधुगंध अधीर।
मनु का मन था विकल हो उठा
संवेदन से खाकर चोट, संवेदन
जीवन जगती को जो
कटुता से देता घोंट।
"आह कल्पना का सुंदर
यह जगत मधुर कितना होता
सुख-स्वप्नों का दल छाया
में पुलकित हो जगता-सोता।
संवेदन का और हृदय का
यह संघर्ष न हो सकता,
फिर अभाव असफलताओं की
गाथा कौन कहाँ बकता?
कब तक और अकेले?
कह दो है मेरे जीवन बोलो?
किसे सुनाऊँ कथा-कहो मत,
अपनी निधि न व्यर्थ खोलो।
"तम के संदरतम रहस्य,
हे कांति-किरण-रंजित तारा
व्यथिति विश्व के सात्विक शीतल बिंदु,
भरे नव रस सारा।
आतप-तपित जीवन-सुख की
शांतिमयी छाया के देश,
हे अनंत की गणना
देते तुम कितना मधुमय संदेश।
आह शून्यते चुप होने में तू क्यों

जागो फिर एक बार
'जयशंकर प्रसाद'

टिप्पणी

इतनी चतुर हुई?
इंद्रजाल-जननी रजनी तू क्यों
अब इतनी मधुर हुई?"
"जब कामना सिंधु तट आई
ले संध्या का तारा दीप,
फाड़ सुनहली साड़ी उसकी
तू हँसती क्यों अरी प्रतीप?
इस अनंत काले शासन का
वह जब उच्छंखल इतिहास,
आँसू और तम घोल लिख रही
तू सहसा करती मृदु हास।
विश्व कमल की मृदुल मधुकरी
रजनी तू किस कोने से
आती चूम-चूम चल जाती
पढ़ी हुई किस टोने से।
किस दिंगत रेखा में इतनी
संचित कर सिसकी-सी साँस,
यों समीर मिस हाँफ रही-सी
चली जा रही किसके पास।
विकल खिलखिलाती है क्यों तू?
इतनी हँसी न व्यर्थ बिखेर,
तुहिन कणों, फेनिल लहरों में,
मच जावेगी फिर अंधेर।
चूँघट उठा देख मुस्कयाती
किसे ठिठकती-सी आती,
विजन गगन में किस भूल सी
किसको स्मृति-पथ में लाती।
रजत-कुसुम के नव पराग-सी
उड़ा न दे तू इतनी धूल
इस ज्योत्सना की, अरी

बावली तू इसमें जावेगी भूल।
पगली हाँ सम्हाल लें,
कैसे छूट पड़ा तेरा अँचल?
देख, बिखरती है मणिराजी
अरी उठा बेसुध चंचल।
फटा हुआ था नील वसन
क्या ओ यौवन की मतवाली।
देख अकिंचन जगत लूटता
तेरी छवि भोली भाली
ऐसे अतुल अंनत विभव में
जाग पड़ा क्यों तीव्र विराग?
या भूली-सी खोज रही
कुछ जीवन की छाती के दाग"
"मैं भी भूल गया हूँ कुछ,
हाँ स्मरण नहीं होता,
क्या था? प्रेम, वेदना,
भांति या कि क्या?
मन जिसमें सुख सोता था
मिले कहीं वह पड़ा अचानक
उसको भी न लुटा देना
देख तुझे भी दूंगा तेरा भाग,
न उसे भुला देना"

5.15 अभ्यास प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. **'भिक्षुक' कविता के कवि कौन हैं?**
2. **'भिक्षुक' कविता किस काव्य-संग्रह में संग्रहित है।**
3. **प्रसाद जी की प्रमुख कृतियों का उल्लेख कीजिए।**
4. **प्रसाद जी का हिन्दी साहित्य में स्थान निर्धरित कीजिए?**
5. **प्रसाद जी का बचपन संघर्ष में बीता। इस पर अपने विचार व्यक्त कीजिए।**

टिप्पणी

विस्तृत उत्तरीय प्रश्न

1. 'भिक्षुक' कविता में कवि भिखारी को किस के जैसा होने को कहते हैं?
2. कवि निराला जी किस की दीनता के प्रति अपनी अपार संवेदनशील सहानुभूति को प्रकट करते हैं?
3. प्रकृति प्रेम के साथ देश प्रेम निराला की कविता में किस तरह एक दूसरे से संबद्ध हैं?
4. प्रसाद जी का हिन्दी साहित्य में योगदान विस्तारपूर्वक लिखिए।
5. "कामायनी" प्रसाद जी का एक महाकाव्य है।" इस पर अपने विचार व्यक्त कीजिए?

♦♦♦♦♦

References and Suggested Reading

lnHk iLrd

शुद्ध कविता की खोज- रामधारी सिंह दिनकर

प्रगतिशील काव्य धारा और केदारनाथ अग्रवाल-डॉ. रामविलास शर्मा

राजस्थान का हिन्दी साहित्य - अशोक वाजपेयी

कामायनी के अध्ययन की समस्याएँ - डॉ. नगेन्द्र

कामायनी एक पुनर्विचार -मुक्तिबोध

कामायनी में काव्य, संस्कृति और दर्शन-डॉ. द्वारिका प्रसाद सक्सेना

निराला की साहित्य साधना - डॉ. रामविलास शर्मा

निराला : आत्महंत आस्था -दूधनाथ सिंह

अज्ञेय- विश्वनाथ तिवारी

लम्बी कविताओं का शिल्प विधान - नरेन्द्र मोहन

मुक्तिबोध - अशोक चक्रधर

समकालीन काव्य यात्रा - नंद किशोर नवल

Internet links

https://www.youtube.com/watch?v=J4zYOfzIUXI

https://www.youtube.com/watch?v=FLvxGbwnvKU

https://www.youtube.com/watch?v=C25P1r1OPqY

https://www.youtube.com/watch?v=geyeZf9NSFs

https://www.youtube.com/watch?v=STp-PyVhids

https://www.youtube.com/watch?v=3GoOejCsN5c

https://www.youtube.com/watch?v=xC0ZpoYsEWo